संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

वर्ष : 8
अंक : 63
मार्च 1998
रु.6/-

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज

ब्रह्मज्ञानी सदा समदर्शी, ब्रह्मज्ञानी की द्रष्टि अमृतवर्षी

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

वर्ष : 8
अंक : 63
मार्च 1998
रु.6/-

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज

'ब्रह्मज्ञानी सदा समदर्शी, ब्रह्मज्ञानी की द्रष्टि अमृतवर्षी'

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ८
अंक : ६३
९ मार्च १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी एवं भार्गवी प्रिन्टर्स, राणीप, अमदावाद में तथा पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

प्रस्तुत है...

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
YES चैनल पर रोज सुबह ८-३० से ९. दोपहर १-३० से २.

अब आश्रम विषयक जानकारी Internet पर उपलब्ध है : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

तीन द्वार

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥

'काम, क्रोध तथा लोभ ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करनेवाले अर्थात् उसको अधोगति में ले जानेवाले हैं। अतएव इन तीनों को त्याग देना चाहिए।' **(भगवद्गीता : १६.२१)**

यदि मनुष्य पतन के इन तीन द्वारों- काम, क्रोध और लोभ को ठीक से समझ जाये तो पतन से बच सकता है और इस लोक में तो सुखी रह ही सकता है, परलोक में भी सुखी हो सकता है। नानकजी ने कहा हैः

इह लोक सुखी परलोक सुखी...

किन्तु मनुष्य यदि काम, क्रोध और लोभ से संयुक्त रहा तो फिर यहाँ भी बरबाद हो जायेगा और परलोक में भी दुःखी हो जायेगा। कभी वृक्ष बनकर कुल्हाड़े सहेगा तो कभी बैल, गधा बनकर बोझा ढोयेगा। कभी कुत्ता बनकर दर-दर की ठोकरें खायेगा तो कभी घोड़ा बनकर चाबुक की मार सहेगा। और भी न जाने कितनी-कितनी योनियों में यह जीव बेचारा भटकता रहेगा।

जीव के जन्म-मरण के चक्र में घूमने का मूल कारण है कामना। अनेक प्रकार की कामनाएँ मानव-मन में उत्पन्न होती रहती हैं। यदि किसी कामना की पूर्ति होती है तो वह लोभ में बदल जाती है और यदि उसकी पूर्ति में कोई अड़चन आती है तो वह क्रोध बन जाती है। ये ही काम, क्रोध और लोभ मानव को नरक के द्वार तक ले जाते हैं।

एक होती है आवश्यकता और दूसरी होती है कामना। आपकी जो आवश्यकता है भोजन, वस्त्र तथा आवास की वह आसानी से पूरी हो जाती है लेकिन व्यर्थ की कामनाएँ पूरी करते-करते तन तंदुरुस्ती, मन प्रसन्नता एवं बुद्धि विवेक खो बैठती है जिससे तन बीमार, मन उद्विग्न और बुद्धि बंधन में डालनेवाली फैक्टरी बन जाती है।

पहले के लोग जितने तंदुरुस्त रहते थे वैसी तंदुरुस्ती के तो आजकल दर्शन ही नहीं हो रहे हैं। पहले जितने प्रसन्न मन से जीते थे वैसी प्रसन्नता के दर्शन भी आज दुर्लभ हो गये हैं और पहले जितने मनीषी, बड़े-बड़े विचारक, जो इहलोक और परलोक की खोज करनेवाले थे आज उतने नहीं हैं। आज तो जरा-जरा-सी बात पर चिढ़ जाना, उद्विग्न हो जाना, भयभीत हो जाना, शंकाशील हो जाना, बेचैन हो जाना ही मानो आज के युग की देन है। यह देन भी केवल इन्हीं तीन कारणों से है : काम, क्रोध और लोभ।

काम केवल सेक्स को ही नहीं कहते हैं। हलकी इच्छा-वासनाएँ भी इसीके अन्तर्गत आती हैं। जो व्यक्ति अपनी ऊर्जा को, अपनी वीर्यशक्ति (Sexual Energy) को सँभालने की युक्ति नहीं जानता वह मुर्गीछाप बच्चे पैदा करता है और निरोध के साधनों का उपयोग करके अपना और अपनी पत्नी का सत्यानाश करता रहता है। फिर न उस व्यक्ति में सहनशक्ति रहती है न आरोग्यता, न स्फूर्ति रहती है न निर्भयता,

आपने सत्संग सुना है अतः आपसे दक्षिणा लेना मेरा अधिकार है और दक्षिणा देना आपका कर्त्तव्य। आप इन तीन विकारों को भगाने का संकल्प करो। 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक पढ़ो और दूसरों को पढ़ाओ। यदि आप ऐसा करते हैं तो समझ लेना मुझे दक्षिणा मिल गयी। आपका बेड़ा पार होने से मुझे दक्षिणा मिल जायेगी। मैं प्रसन्न हो जाऊँगा।

न ध्यान की रुचि रहती है न सत्संग की, न परमात्मा को जानने की रुचि रहती है और न परमात्मा को पाने की, क्योंकि इससे मानव अंदर से खोखला हो जाता है। आज का जवान समझता ही नहीं कि 'अपनी कितनी अनमोल शक्ति का मैं अपने ही हाथों से, अपने विकारी व्यवहार से नाश कर रहा हूँ।' उसके चेहरे पर गड्ढे पड़ जाते हैं तथा उसकी आँखों की रोशनी जल्दी से खत्म होने लगती है।

आपकी जो आवश्यकता है भोजन, वस्त्र तथा आवास की, वह आसानी से पूरी हो जाती है लेकिन व्यर्थ की कामनाएँ पूरी करते-करते तन तंदुरुस्ती, मन प्रसन्नता एवं बुद्धि विवेक खो बैठती है जिससे तन बीमार, मन उद्विग्न और बुद्धि बंधन में डालनेवाली फैक्टरी बन जाती है।

पेरिस में और स्विस में जाँच करने पर पता चला कि अठारह साल के पहले ही जो लोग वीर्यग्रंथि खाली करके बैठ जाते हैं उनकी संतति भी खिन्न मनवाली ही पैदा होती है। २१ साल तक अगर संयम से रहकर फिर बालक को जन्म दे तो बालक तेजस्वी एवं बुद्धिमान होगा। आज तो १४ साल के बच्चे भी...

मैं तो कहूँगा कि आपने सत्संग सुना है अतः आपसे दक्षिणा लेना मेरा अधिकार है और दक्षिणा देना आपका कर्त्तव्य। मैं आपसे और दक्षिणा तो नहीं चाहता लेकिन आप इन तीन विकारों को भगाने का संकल्प करो। 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक पढ़ो और दूसरों को पढ़ाओ। यदि आप ऐसा करते हैं तो समझ लेना मुझे दक्षिणा मिल गयी। आपका बेड़ा पार होने से मुझे दक्षिणा मिल जायेगी। मैं प्रसन्न हो जाऊँगा।

कामनाओं को अगर बिना नीति और मर्यादा के पूरा करने में मानव लग जाता है तो उसका मन दुर्बल होने लगता है। बुद्धि विनाश की ओर जाने लगती है और शरीर रोगों का शिकार हो जाता है।

कामनाओं को अगर बिना नीति और मर्यादा के पूरा करने में मानव लग जाता है तो उसका मन दुर्बल होने लगता है। बुद्धि विनाश की ओर जाने लगती है और शरीर रोगों का शिकार हो जाता है। आप नहीं चाहते कि आपका तन रोगी, मन खिन्न और बुद्धि नष्ट होने लगे। फिर भी यदि आप कामनाओं को व्यर्थ ही पोसते रहेंगे तो ये तीनों शत्रु आपको गिरा देंगे। नरक को भी शर्म आती है इन तीन शत्रुओं- काम, क्रोध एवं लोभ के आगे। ये महा नरक हैं।

धन कमाना चाहिए लेकिन अधिक कमाने के लोभ में मनुष्य ऐसा पागल हो जाता है कि उसे पता ही नहीं चलता कि जो है वह भी छोड़कर जाना है और जो साथ रहेगा (परमात्मा) उसके लिए समय नहीं मिलता है। कैसा मनुष्य का दुर्भाग्य है! लोभ मानव को मूर्ख बना देता है। उसे जो वास्तव में करना चाहिए (परमात्म-प्राप्ति) वह नहीं करने देता है और जिसे छोड़कर जाना है उसके पीछे पागल कर देता है। फिर चाहे धन के लिए रिश्वत लेना पड़े, कपट करना पड़े, अपनी नींद हराम करनी पड़े। ऐसा करने से उनके बच्चों की बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। वह स्वयं 'खपे... खपे...' (चाहिए...चाहिए...) में खप जाता है।

क्रोध : छोटी-छोटी बात में मनुष्य कई बार क्रुद्ध हो जाता है। जो माँ किसी कारणवश अति क्रोध में है और उसी क्रोध में शिशु को स्तनपान कराये तो उस शिशु की मृत्यु तक हो सकती है क्योंकि क्रोध एक जहर है। यदि आधे घंटे तक आप क्रोध करते हो तो आपके शरीर की रोग-प्रतिकारक शक्ति क्षीण हो जाती है। एक बार आप क्रोध करते हो तो आपके आंतरिक यंत्रों को अधिक काम करके वह घाटा पूरा करना पड़ता है।

क्रोध आने के कई कारण होते हैं। जो व्यक्ति अति कामी है, शराबी-कबाबी है उसको जरा-जरा-सी बात पर क्रोध आयेगा। अति क्रोधी व्यक्ति के चेहरे पर खिन्नता की रेखाएँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। यदि मनुष्य एक-दो महीने

प्रतिदिन शान्त रहने का संकल्प करे और संयमी जीवन गुजारे तो उसके चेहरे का आकर्षण बढ़ जायेगा । फिर उसकी एक मीठी निगाह भी सामनेवाले को अपना बनाने का काम करने लगे । सामनेवाले का हृदय उसके स्नेह का आकांक्षी बन जाये ।

आपमें इतनी शक्ति है। फिर भी आप अपनी शक्ति का ह्रास इन्हीं तीन हथियारों से कर रहे हो। आप कृपा करके इन हथियारों को फेंक दो अथवा इन हथियारों का सही उपयोग करो । जैसे तलवार शत्रु को ठीक करने के काम आती है और बेवकूफी होती है तो हमारा पैर भी काट देती है। विद्युत् अँधेरा दूर करने के काम भी आती है और करंट लगने पर मरण का कारण भी बन जाती है। ऐसे ही काम, क्रोध और लोभ अगर ठीक जगह पर लगते हैं तो परमात्मा की प्राप्ति करा देते हैं और गलत जगह पर लगते हैं तो बरबादी कर देते हैं।

जो व्यक्ति अपनी ऊर्जा को, अपनी वीर्यशक्ति (Sexual Energy) *को सँभालने की युक्ति नहीं जानता वह मुर्गीछाप बच्चे पैदा करता है और निरोध के साधनों का उपयोग करके अपना और अपनी पत्नी का सत्यानाश करता रहता है।*

जो व्यक्ति अति कामी होता है वह जरा-जरा बात पर गुस्सा हो जाता है । उसके स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है। वह स्वयं तो परेशान रहता ही है, उसके बच्चे भी उसे परेशान करते हैं।

महापुरुष की पहचान क्या है ? जरा-जरा-सी बात नहीं बल्कि बड़ी-बड़ी बातों के समय भी, बड़ी-बड़ी मुसीबतों के समय भी महापुरुष के चित्त का सन्तुलन बना रहता है।

गुरु शिष्य को महान् बनाना चाहते हैं इसीलिए शिष्य को कहते हैं : 'जाओ, मधुकरी करके आओ।' जब शिष्य मधुकरी (भिक्षा) माँगने जायेगा तब कोई मान देगा तो कोई अपमानजनक बातें कहेगा। उस समय चित्त कैसा रहता है ? यह देखो । शिष्य को मान पर विजय पानेवाला बनाना है तो गुरु शिष्य से मधुकरी करवाते थे। किसीसे दो दिन तो किसीसे दो साल... जैसी शिष्य की योग्यता हो। इस प्रकार गुरुदेव शिष्य के मान-अपमान की मुसीबत को दूर करने की युक्ति जानते हैं।

कामना करनी है तो इस बात की करो कि 'मैं सुख-दुःख में सम कैसे रहूँ ? मैं जन्म-मरण के चक्र को कैसे तोड़ूँ ? मैं गार्गी की नाईं ब्रह्मज्ञान कैसे पा लूँ ? मैं नानक और हरगोविन्द की नाईं अपने हर (शिव) को कैसे पा लूँ ? कबीर और महावीर की नाईं अपनी आत्मा में स्थिति कैसे कर लूँ ? शबरी की नाईं अपने चित्त को परमात्मा के प्रसाद से कैसे भरूँ ? राजा जनक की नाईं राज्य करते हुए भी इन तीन शत्रुओं को अपने आधीन करके शम, सन्तोष और सत्संग का अवलम्बन लेकर जीवन्मुक्त दशा में कैसे जीऊँ ?' इस प्रकार की कामना करने से हलकी कामनाएँ निकल जाएँगी। जैसे काँटे से काँटा निकलता है वैसे ही ऊँची कामना करने से हलकी कामनाएँ निकल जायेंगी।

इन तीन विकारों का गला दबाकर अहंकार को मार दो, यार ! फिर मृत्यु के बाप की भी ताकत नहीं कि आपका बाल तक बाँका कर सके ! ऐसा अमृत, ऐसा आत्मरस आपमें भरा है।

आधे घंटे तक आप क्रोध करते हो तो आपके शरीर की रोग-प्रतिकारक शक्ति क्षीण हो जाती है। एक बार आप क्रोध करते हो तो आपके आंतरिक यंत्रों को अधिक काम करके वह घाटा पूरा करना पड़ता है।

क्रोध किन कारणों से आता है ? आप यदि काम-विकार से अधिक ग्रस्त रहते हो, नीचे के केन्द्रों में रहते हो तो क्रोध करने की आदत पड़ जाती है। दूसरी बात कि शरीर में 'मैं' पना होता है और अपने में बड़प्पन की भावना होती है कि 'हमें कोई बड़ा माने।' अन्दर में अहंकार सजा-धजा होता है और आपके अहंकार के विपरीत यदि कोई थोड़ा-सा भी काम करता है तो

क्रोध पैदा होता है। आपकी इच्छा के विरुद्ध कोई करता है तो क्रोध पैदा हो जाता है। उस समय यदि विचार करें कि साधारण व्यक्ति जो गलती करता है, उसकी जगह पर यदि मैं होता और मेरी बुद्धि ऐसी होती तो मैं भी तो ऐसा ही करता। ऐसा विचार करने से क्रोध पर नियंत्रण होता है। अत्यधिक क्रोध के समय अपनी मुट्ठियाँ भींच देने से भी क्रोध नियंत्रित होने लगता है।

जीवन में क्रोध की जगह पर क्षमा का गुण लाना चाहिए। नहीं तो कभी पत्नी की गलती होगी कभी पति की होगी, कभी बेटी की होगी तो कभी बहू की और आप क्रोध से झुलसते ही रहोगे। जरा-जरा बात पर क्रोधित होते रहोगे। एक बार क्रोध करने से आपके शरीर को जो हानि होती है उसकी पूर्ति करने के लिए कई महीनों तक आपकी जीवनशक्ति खर्च हो जाती है।

...तो मनुष्य के पतन के ये ही तीन द्वार हैं : काम, क्रोध और लोभ। फैशन का लोभ, धन का लोभ, बड़ा कहलाने का लोभ मनुष्य को परेशान कर देता है। लोभ यदि करना ही है तो हृदय को सजाने का लोभ करो, सत्शास्त्रों का ज्ञान पाने का, हरिनाम का, सत्कर्म करने का लोभ करो। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि 'पातक भी डरते हैं इन तीन पातकों से।' लोभ करना है तो अच्छी बात का करो। कामना करनी है तो अच्छी बातों की कामना करो और क्रोध करना है तो इस बात पर करो कि 'अभी २५ साल बीत गये... अभी तक ध्यान नहीं लगा, परमात्मा का ज्ञान नहीं हुआ।' क्रोध करना है तो इस बात पर करो कि 'जिंदगी बीती जा रही है और अपनेको चतुर मान रहे हो ! धिक्कार है ऐसी चतुराई को !'

चतुराई चूल्हे परी, पूर परयो आचार।
तुलसी हरि के भजन बिन, चारों वर्ण चमार ॥

जो व्यक्ति अति कामी है, शराबी-कबाबी है उसको जरा-जरा-सी बात पर क्रोध आयेगा। अति क्रोधी व्यक्ति के चेहरे पर खिन्नता की रेखाएँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।

आप जिससे भी बात करते हो वह कोई मशीन थोड़े ही है ! उसको आपके स्नेह की जरूरत है, सहानुभूति और प्रेम की जरूरत है, हिम्मत की जरूरत है।

चतुराई तो इस बात में है कि क्रोध करानेवाले प्रसंगों में भी आप अपने विवेक को जागृत रख सको। किसीने 'गधा' कह दिया तो आपका खून उबलने लगता है किन्तु किसीने 'राम-राम' कह दिया तो हृदय में आनंद क्यों नहीं उभरता ? 'गधा' कहने से आपको पूँछ तो नहीं निकल आयी, मुँह तो लंबा नहीं हुआ और दो पैर भी नहीं बढ़े ? बोलनेवाले ने तो बोल दिया, शब्द हवा में हवा हो गया लेकिन 'मुझे गधा कहा अतः इसकी खबर लेकर रहूँगा' - ऐसा कहकर अपना संतुलन न गँवाओ। उस समय अपने मन को संतुलित रखो। बहू कुछ कह देती है तो मन को सन्तुलित रखो और सास कुछ कह देती है तो भी मन को संतुलित रखो। पति कुछ कह देता है, पत्नी कुछ कह देती है या पड़ोसी कुछ कह देता है तो कहनेवाले का तो घाटा होता है लेकिन सुननेवाला अगर संतुलित हो तो सुननेवाले को फायदा ही फायदा होता है।

अगर कोई आपकी निंदा करता है तो उसको धन्यवाद दो। अगर आपकी गलती है तो गलती निकालने के लिए बेचारा मेहनत कर रहा है और गलती नहीं है तो आपके पाप धोने के लिए मेहनत कर रहा है। अतः आप प्रसन्न हो जाओ। उस पर जरा कृपादृष्टि कर दो तो आपका हृदय और भी पवित्र हो जायेगा।

निंदक नियरे राखिये, निंदक संत समान।
आप पड़े नरक में, हमको देवें निर्वाण ॥

जैसे संसाररूपी नरक में, विघ्न-बाधाओंरूपी नरक में आकर भी संत हमको ब्रह्मज्ञान के अमृत की ओर ले जाते हैं ऐसे ही निंदक लोग अपने-आपको नीचे गिराकर भी हमारी गलतियाँ निकालते हैं, पाप धोते हैं। जब कोई निंदा करे तो भगवान को धन्यवाद दो कि 'भगवान तेरी कितनी कृपा है !' नहीं तो निंदा

सुनकर क्रोध होगा, ईर्ष्या होगी। निंदा सुनकर आपका रक्त भी खराब होगा। निंदा सुनकर यदि कथा की यह बात याद आ जाये तो आपके पाप जल जायेंगे, क्रोध दूर हो जायेगा, मन पवित्र हो जायेगा तथा रक्त भी शुद्ध होगा और देर-सबेर परम शुद्ध परमात्मा के प्रसाद को पाने की कला आ जायेगी।

ऐसे ही काम-विकार की कोई हलकी बात आ जाये तो अपनेको उसमें ही मत लगा दो। सोचो कि इतना भोग लिया, इतना कर लिया फिर क्या ? क्रोध आ जाये तो उस जगह को छोड़कर पाँच-पच्चीस कदम दूर चले जाओ। हाथ-पैर धोकर पानी के कुछ घूँट पी लो। कोई अच्छी पुस्तक खोलकर बैठ जाओ अथवा एक दर्पण लेकर बैठ जाओ। क्रोध के समय आयने में तो आपको अपना भद्दा चेहरा ही दिखेगा जिसे आप पसंद नहीं करेंगे।

यदि दो व्यक्ति आपस में लड़ रहे हों तो आप तीसरे वहाँ जाकर लड़ाई बढ़ाओ मत वरन् पानी का लोटा भरकर एक चुल्लू एक पर डालो, दूसरा दूसरे पर छींटो और तीसरा छींटा स्वयं पर डालकर जोर से बोलो 'नारायण... नारायण... नारायण... नारायण...।' घर में थोड़ा-बहुत झगड़ा हो जाये तो ऐसा करने से वह झगड़ा, वह क्रोध भक्ति में बदल सकता है।

माता-पिता और गुरुजन भी कभी-कभी क्रुद्ध दिखते हैं। माता-पिता और गुरुजन यदि सावधान होकर क्रुद्ध दिखते हैं तो आपके अनुशासन के लिए। उनका क्रोध उनको सताता नहीं है किन्तु क्रोध करते-करते फिर यदि ज्यादा देर तक क्रोध का असर रहता है तो उनको घाटा होता है। उनके भीतर यदि करुणा है, दया है, आपकी उन्नति की कामना है और बाहर से जरा डाँटते हैं, क्रोधित हो जाते हैं तो इसमें आपका कल्याण है और उनको कोई हानि नहीं है। जैसे वशिष्ठजी महाराज कभी कहते हैं : ''वनवास सीता को नहीं, राम को मिला है। हे कैकेयी ! मैं जो कहूँगा, वही होगा।'' यहाँ वशिष्ठजी क्रोधित होते दिखते हैं लेकिन उनके हृदय में कुछ नहीं है। अगर ऐसे महापुरुषों की तरह क्रोध करने की कला है तो क्रोध करते समय भी आपका कुछ नहीं बिगड़ता। नहीं तो क्रोध करते समय आपका तो बिगड़ता ही है और जिसको आप सुधारना चाहते हो उसके हृदय में भी आपके लिए श्रद्धा और आदर नहीं रहता।

कोई आपकी निंदा करता है तो उसको धन्यवाद दो। अगर आपकी गलती है तो गलती निकालने के लिए बेचारा मेहनत कर रहा है और गलती नहीं है तो आपके पाप धोने के लिए मेहनत कर रहा है। अतः आप प्रसन्न हो जाओ। उस पर जरा कृपादृष्टि कर दो तो आपका हृदय और भी पवित्र हो जायेगा।

तीन महीने रात्रि को सोते समय कंठ में तीन-चार मिनट के लिए ध्यान करके सो जाओ तो स्वप्न में आपको अपने इष्टदेव के दर्शन हो सकते हैं। अगर छः महीने दृढ़ता से अभ्यास करते हो तो स्वप्न में अपने इष्ट के साथ बातचीत भी कर सकते हो।

एक सेठजी ड्राइवर को डाँट रहे थे। गाड़ी में बैठे हुए बाबाजी ने कहा : ''बेचारे ड्राइवर को क्यों डाँटते हो ?''

सेठ बोले : ''बाबाजी ! इसने साइड काट ली। अभी मर भी सकते थे। बाबाजी ! डाँटकर मैं उसे सुधार रहा हूँ।''

बाबा बोले : ''बेटा ! अपना हृदय बिगाड़कर आप उसको कब तक सुधारोगे ? पहले अपने हृदय को सुधार लो, अपने हृदय को शीतल कर लो। आपका हृदय क्रोध की आग से नहीं जलना चाहिए।''

वाणी ऐसी बोलिये, जो मनवा शीतल होय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय॥

आप जिससे भी बात करते हो वह कोई मशीन थोड़े ही है! उसको आपके स्नेह की जरूरत है, सहानुभूति और प्रेम की जरूरत है, हिम्मत की जरूरत है। जो आपसे नीचे हैं, आपसे ऊपर हैं और आपकी

सुनकर क्रोध होगा, ईर्ष्या होगी। निंदा सुनकर आपका रक्त भी खराब होगा। निंदा सुनकर यदि कथा की यह बात याद आ जाये तो आपके पाप जल जायेंगे, क्रोध दूर हो जायेगा, मन पवित्र हो जायेगा तथा रक्त भी शुद्ध होगा और देर-सबेर परम शुद्ध परमात्मा के प्रसाद को पाने की कला आ जायेगी।

कोई आपकी निंदा करता है तो उसको धन्यवाद दो। अगर आपकी गलती है तो गलती निकालने के लिए बेचारा मेहनत कर रहा है और गलती नहीं है तो आपके पाप धोने के लिए मेहनत कर रहा है। अतः आप प्रसन्न हो जाओ। उस पर जरा कृपादृष्टि कर दो तो आपका हृदय और भी पवित्र हो जायेगा।

ऐसे ही काम-विकार की कोई हलकी बात आ जाये तो अपनेको उसमें ही मत लगा दो। सोचो कि इतना भोग लिया, इतना कर लिया फिर क्या ? क्रोध आ जाये तो उस जगह को छोड़कर पाँच-पच्चीस कदम दूर चले जाओ। हाथ-पैर धोकर पानी के कुछ घूँट पी लो। कोई अच्छी पुस्तक खोलकर बैठ जाओ अथवा एक दर्पण लेकर बैठ जाओ। क्रोध के समय आयने में तो आपको अपना भद्दा चेहरा ही दिखेगा जिसे आप पसंद नहीं करेंगे।

तीन महीने रात्रि को सोते समय कंठ में तीन-चार मिनट के लिए ध्यान करके सो जाओ तो स्वप्न में आपको अपने इष्टदेव के दर्शन हो सकते हैं। अगर छः महीने दृढ़ता से अभ्यास करते हो तो स्वप्न में अपने इष्ट के साथ बातचीत भी कर सकते हो।

यदि दो व्यक्ति आपस में लड़ रहे हों तो आप तीसरे वहाँ जाकर लड़ाई बढ़ाओ मत वरन् पानी का लोटा भरकर एक चुल्लू एक पर डालो, दूसरा दूसरे पर छींटो और तीसरा छींटा स्वयं पर डालकर जोर से बोलो 'नारायण... नारायण... नारायण... नारायण...।' घर में थोड़ा-बहुत झगड़ा हो जाये तो ऐसा करने से वह झगड़ा, वह क्रोध भक्ति में बदल सकता है।

माता-पिता और गुरुजन भी कभी-कभी क्रुद्ध दिखते हैं। माता-पिता और गुरुजन यदि सावधान होकर क्रुद्ध दिखते हैं तो आपके अनुशासन के लिए। उनका क्रोध उनको सताता नहीं है किन्तु क्रोध करते-करते फिर यदि ज्यादा देर तक क्रोध का असर रहता है तो उनको घाटा होता है। उनके भीतर यदि करुणा है, दया है, आपकी उन्नति की कामना है और बाहर से जरा डाँटते हैं, क्रोधित हो जाते हैं तो इसमें आपका कल्याण है और उनको कोई हानि नहीं है। जैसे वशिष्ठजी महाराज कभी कहते हैं : ''वनवास सीता को नहीं, राम को मिला है। हे कैकेयी ! मैं जो कहूँगा, वही होगा।'' यहाँ वशिष्ठजी क्रोधित होते दिखते हैं लेकिन उनके हृदय में कुछ नहीं है। अगर ऐसे महापुरुषों की तरह क्रोध करने की कला है तो क्रोध करते समय भी आपका कुछ नहीं बिगड़ता। नहीं तो क्रोध करते समय आपका तो बिगड़ता ही है और जिसको आप सुधारना चाहते हो उसके हृदय में भी आपके लिए श्रद्धा और आदर नहीं रहता।

एक सेठजी ड्राइवर को डाँट रहे थे। गाड़ी में बैठे हुए बाबाजी ने कहा : ''बेचारे ड्राइवर को क्यों डाँटते हो ?''

सेठ बोले : ''बाबाजी ! इसने साइड काट ली। अभी मर भी सकते थे। बाबाजी ! डाँटकर मैं उसे सुधार रहा हूँ।''

बाबा बोले : ''बेटा ! अपना हृदय बिगाड़कर आप उसको कब तक सुधारोगे ? पहले अपने हृदय को सुधार लो, अपने हृदय को शीतल कर लो। आपका हृदय क्रोध की आग से नहीं जलना चाहिए।''

वाणी ऐसी बोलिये, जो मनवा शीतल होय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय॥

आप जिससे भी बात करते हो वह कोई मशीन थोड़े ही है! उसको आपके स्नेह की जरूरत है, सहानुभूति और प्रेम की जरूरत है, हिम्मत की जरूरत है। जो आपसे नीचे हैं, आपसे ऊपर हैं और आपकी

बराबरी के हैं वे सब आपसे कुछ चाहते हैं । वे आपसे दुःख नहीं चाहते, अपमान नहीं चाहते, मुसीबतें नहीं चाहते । वरन् आपसे मुसीबत मिटवाना चाहते हैं, दुःख मिटवाना चाहते हैं, अपमान के घाव भरवाना चाहते हैं ।

आप जब ये तीन गुण- शम, संतोष और सत्संग अपने जीवन में ले आओगे और निज आत्मा का ज्ञान पा जाओगे तब जिसकी जैसी भावना होगी उसे वैसी ही चीज दे देने में आप सक्षम हो जाओगे ।

मुक्ति के तीन द्वार हैं- शम, सन्तोष और सत्संग । ये तीनों उत्थान के द्वार हैं, मोक्ष के द्वार हैं । इहलोक और परलोक में सर्वांगीण विकास इन्हीं तीन चीजों से होता है ।

उत्थान के इन तीन द्वारों को यदि मनुष्य ठीक से समझ जाये तो जब चाहे उनमें प्रविष्ट हो सकता है ।

'शम' माना मन को रोकने का प्रयास । मन को गलत रास्ते पर जाने से रोकना, जाते हुए मन को देखना और उसे अपना हस्ताक्षर न देना अर्थात् अपनी संमति न देना, उसको जरा समझाना, यही शम है । संसार के ऐश-आराम और बुरे कार्यों से संतोष करना कि अब तक तो बहुत खाया, बहुत पिया, बहुत भटके, बहुत छल-कपट किया । अब उन विषय-विकारों को बढ़ानेवाले हलके व्यवहार से बच जायें ऐसी इच्छा करना ही संतोष है । सत्संग क्या है ? संतों के सान्निध्य में रहना, उनकी वाणी सुनना, सत्शास्त्रों का अध्ययन करना, यही सत्संग है ।

असत् का आकर्षण एवं सत् की ममता छोड़कर विश्रांति पाना, उसे सत्संग कहते हैं ।

ये तीन बातें अगर जीवन में आ गयीं तो आप दाता की जगह पर पहुँच जाओगे, भैया ! आप मान चाहनेवालों को मान, सहानुभूति की आवश्यकता-वालों को सहानुभूति के वचन, ज्ञान के जिज्ञासुओं को ज्ञान और भक्ति की अभीप्सावालों को भक्ति देने में समर्थ हो जाओगे । परमात्म-प्रेम के पिपासुओं को प्रेम दे सकोगे और संसार की परेशानियोंवाले को परेशानियाँ सुलझाने के लिए सुन्दर एवं मधुर सलाह दे सकोगे । आप भगवान की तरह दाता बन जाओगे । भगवान का ज्ञान जिसके हृदय में हो जाता है उसका दिल भी दाता के गुणों से अपने-आप पूर्ण हो जाता है ।

अगर आपने इन तीन शत्रुओं को पकड़ रखा अर्थात् काम, क्रोध और लोभ को पकड़ रखा तो भैया ! फिर आप दूसरों की समस्याओं को क्या सुलझाओगे ? आपकी खुद की इतनी समस्याएँ हो जाएँगी कि जरा-जरा बात पर क्रोधित, भयभीत, चिंतित और बीमार हो जाओगे । फिर मंदिर जाओ तो क्या फर्क पड़ता है ? मस्जिद जाओ तो क्या फर्क पड़ता है ? चर्च में जाओ तो क्या फर्क पड़ता है ? कहते हैं कि,

खुदा खैर करे, तो बंदा लैर करे ।

अरे भाई ! खुदा बिचारा तो रोज खैर करता है किन्तु बंदा इन तीन शत्रुओं को छोड़े तभी लैर करता है । नहीं तो बंदा अशांति की आग पैदा करता है ।

इन्सान की बदबख्ति, अंदाज से बाहर है ।
कमबख्त खुदा होकर, बंदा नजर आता है ॥

जीव है तो ईश्वर का अंश किन्तु अपने को बंदा मान बैठा है ।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।

आप ईश्वर के सनातन अंश हो । आप भगवान की जाति के हो । भगवान अगर हिन्दू हैं तो आप हिन्दू

वाणी ऐसी बोलो कि व्यर्थ की चर्चा न हो । देखो ऐसे कि जिससे व्यर्थ का कचरा अंदर न आये । ऐसा सुनो कि जिससे अंदर में अशांति न आये, ऐसा सूँघो कि व्यर्थ के विकार न बढ़ें और ऐसा खाओ कि उत्तेजना न बढ़े । ऐसा करने से आप चलते-फिरते भी साधना कर सकते हो ।

शम, सन्तोष और सत्संगरूपी अमृत के घूँट पिओ । सत्संग के विचारों में रहो । काम करने की थकान नहीं आयेगी । निर्भयता बढ़ेगी और आपकी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होगा ।

और भगवान अगर मुसलमान हैं तो आप मुसलमान।

एक पहुँचे हुए फकीर ने कहा है : ''खुदा अगर खुदा है तो मैं भी खुदा हूँ।''

आप स्वयं खुदा हो किन्तु नाहक खुदा से जुदा हो जाते हो। खुदा से जुदा भी आप इन तीन शत्रुओं के कारण ही होते हो। इन तीन चीजों- काम, क्रोध और लोभ को जब आप सहमति देते हो तभी आप खुदा से जुदा होकर नरकों में, शरीरों के जन्म-मरण के चक्र में जाते हो। यदि इन तीन चीजों पर नियंत्रण करते हो तो आपके लिए मुक्ति के द्वार खुलने लगते हैं और इन पर नियंत्रण करने के लिए ही आपको तीन चीजें दे रहे हैं भगवान। वे चीजें हैं शम, संतोष और सत्संग। इन तीन चीजों को आप पकड़ लो और उन तीन शत्रुओं को भगा दो। फिर इनको पकड़ने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी। जैसे काँटे से काँटा निकाला जाता है और अंत में दोनों काँटे फेंक दिये जाते हैं ऐसे ही अज्ञानरूपी काँटे को ज्ञानरूपी काँटे से निकालकर अंत में उससे भी परे हो जाना पड़ता है। फिर तो आपका जीवन कबीर जैसा होते देर न लगेगी। कबीरजी कहते हैं :

कबीरा मन निर्मल भयो, जैसे गंगा-नीर।
पीछे-पीछे हरि फिरें, कहत कबीर-कबीर॥

ऐसा आपका जीवन भी हो सकता है और यह कठिन नहीं है। कइयों के पास श्रद्धा होती है तो विचार नहीं होता। कइयों के पास विचार होता है तो श्रद्धा नहीं होती। कइयों के पास विचार और श्रद्धा दोनों होते हैं तो ये तीन शत्रु ऐसे हैं कि उन्हें ऊपर नहीं उठने देते। इन तीन शत्रुओं को मार भगाओ। फिर थोड़ा-सा विचार है तो भी काफी है और थोड़ी-सी श्रद्धा है तो भी काफी है। बाकी का सब हो जायेगा। आप केवल इन तीन चीजों- काम, क्रोध और लोभ को छोड़ दो और इन तीन चीजों- शम, संतोष और सत्संग को पकड़ लो फिर आपके लिए सब संभव हो जायेगा।

कपड़े में जब मलिनता आ जाती है तब साबुन-सोड़ा द्वारा एवं कूट-पीटकर उसकी गंदगी को हटाया जाता है। उसमें सफेदी लायी नहीं जाती, वह तो होती ही है। ऐसे ही मारपीट करके अर्थात् विघ्न-बाधाएँ देकर, अभ्यास करके आपमें भगवान लाया नहीं जाता। केवल अज्ञान का पर्दा हटाना पड़ता है, विकारों की गंदगी को हटाना पड़ता है। फिर आप स्वयं ही शुद्ध, सच्चिदानंदस्वरूप हो ऐसा दीदार हो जाता है इसमें जरा भी संशय नहीं है।

जो व्यक्ति छः महीने भी दृढ़ता से इस मार्ग पर चल पड़ता है तो उसे ईश्वर का साक्षात्कार हो सकता है। उसके हृदय में परमात्मा का दीदार हो सकता है। यदि तीन महीने रात्रि को सोते समय कंठ में तीन-चार मिनट के लिए ध्यान करके सो जाओ तो स्वप्न में आपको अपने इष्टदेव के दर्शन हो सकते हैं। आपकी नाड़ियाँ शुद्ध हो जायेंगी। यह बिल्कुल होना ही चाहिए। अगर छः महीने दृढ़ता से अभ्यास करते हो तो स्वप्न में अपने इष्ट के साथ बातचीत भी कर सकते हो। रात्रि को केवल तीन-चार मिनट... और यह आप कर सकते हो।

मैं यह नहीं कहूँगा कि आप हिमालय की गुफाओं में चले जाओ। नहीं... अभी वह जमाना नहीं है। मैं तो कहूँगा कि आप चालू व्यवहार में, चालू ऑफिस में यह कर सकते हो। आप इन तीन शत्रुओं को भगाने का संकल्प करो और इन तीन मित्रों को बुलाने का संकल्प करो तो आपकी साधना ऑफिस में भी चालू रहेगी, दुकान पर भी चालू रहेगी। अरे ! रसोईघर में भी चालू रह सकती है। बस, शर्त यही है कि आप एक घंटे में एक-दो मिनट निकालकर इन तीन बातों को याद कर लो। ऐसा करने से बात करते-करते भी आप अपनी साधना चालू रख सकते हो।

वाणी ऐसी बोलो की व्यर्थ की चर्चा न हो। देखो ऐसे कि जिससे व्यर्थ का कचरा अंदर न आये। ऐसा सुनो कि जिससे अंदर में अशांति न आये, ऐसा सूँघो कि व्यर्थ के विकार न बढ़ें और ऐसा खाओ कि उत्तेजना

न बढ़े। ऐसा करने से आप चलते-फिरते भी साधना कर सकते हो।

हसिबो खेलिबो धरिबो ध्यान, अहर्निश कथिबो ब्रह्मज्ञान।
खावे, पीवे न करे मन भंगा, कहे नाथ मैं उसके संगा॥

खाओ, पिओ, रहो लेकिन मन को भंग मत करो। इन तीन शत्रुओं के डण्डे मत खाओ वरन् तीन मित्रों के सान्निध्य में रहो। शम, सन्तोष और सत्संगरूपी अमृत के घूँट पिओ। सत्संग के विचारों में रहो। काम करने की थकान नहीं आयेगी। निर्भयता बढ़ेगी और आपकी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होगा। आप एक बार गाँठ बाँध लो कि अब बार-बार पशु नहीं होना है। बार-बार उत्तेजित नहीं होना है। कई बार अपने आपको बहुत सताया, अब नहीं सताना है वरन् अपने आपको अमृतमय करना है। आप इस बात की गाँठ बाँध लो। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सावधान रहो। आपका उद्देश्य निश्चय ही पूर्ण हो जायेगा। फिर आप तो तर जाओगे और जिस जननी ने आपको जन्म दिया है वह भी धन्य हो जायेगी। आपका कुल भी पावन हो जायेगा।

मुक्ति के तीन द्वार हैं- शम, सन्तोष और सत्संग। ये तीनों उत्थान के द्वार हैं, मोक्ष के द्वार हैं। इहलोक और परलोक में सर्वांगीण विकास इन्हीं तीन चीजों से होता है।

काम, क्रोध और लोभ इन शत्रुओं पर जितनी-जितनी विजय प्राप्त करते हैं और शम, सन्तोष एवं सत्संग इन तीन मित्रों को जितना-जितना बढ़ाते हैं उतनी-उतनी आपके मन में और बुद्धि में विलक्षणता आती है। आपके दिल में भी ऐसी विलक्षणता आती है कि दिल दिलबर के साक्षात्कार का अनुभव करके मुक्त हो जाता है। केवल आप तीन मित्रों से दोस्ती कर लो और तीन शत्रुओं को पहचान लो। इसमें ज्यादा मेहनत नहीं करनी। पक्का निश्चय कर लो कि यह करना है। गलत अभ्यास पुराना है इसलिए उसे हटाने के लिए मेहनत करनी पड़ती है, वरना कोई मेहनत नहीं है। आनंद और मुक्ति तो आपका स्वभाव है।

कपड़े में जब मलिनता आ जाती है तब साबुन-सोड़ा द्वारा एवं कूट-पीटकर उसकी गंदगी को हटाया जाता है। उसमें सफेदी लायी नहीं जाती, वह तो होती ही है। ऐसे ही मारपीट करके अर्थात् विघ्न-बाधाएँ देकर, अभ्यास करके आपमें भगवान लाया नहीं जाता। केवल अज्ञान का पर्दा हटाना पड़ता है, विकारों की गंदगी को हटाना पड़ता है। फिर आप स्वयं ही शुद्ध, सच्चिदानंदस्वरूप हो ऐसा दीदार हो जाता है इसमें जरा भी संशय नहीं है और यह मरने के बाद होगा ऐसा नहीं, भविष्य में होगा ऐसा भी नहीं, वह तो अभी संभव है। भविष्य में क्या होगा यह तो भगवान जानता है।

काम, क्रोध और लोभ मोह की जब लग मन में खान।
तुलसी दोनों एक है क्या मूरख और विद्वान॥

आप केवल इन तीन बातों- काम, क्रोध और लोभ से सावधान हो जाइए, सतर्क हो जाइए और इन तीन बातों अर्थात् शम, सन्तोष और सत्संग से मित्रता कर लीजिए। फिर संसार आपको नंदनवन लगने लगेगा। संसार में जीना आपके लिए स्वर्गीय हो जायेगा और संसार से अलविदा होने में भी आपके लिए यमदूत या मृत्यु का भय नहीं रहेगा।

जहाँ मरने से जग डरे, मोरे घर आनंद।
कब मरिये कब मिलिए, पाइए पूरण परमानंद॥

जीते-जी भी आपके हाथ में लड्डू और मरने के बाद भी लड्डू। भोग और मोक्ष दोनों आपके आधीन हो जाएँगे।

❀

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी तरह की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें। (२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

कुंभ : महा पर्व

कुंभ क्यों मनाया जाता है इस पर एक अति प्राचीन कथा का उल्लेख शास्त्रों में आता है :

पौराणिक गाथानुसार हिमालय पर्वत के समीप क्षीरोद नामक समुद्र तट के थोड़े अन्तर पर देवताओं और दानवों द्वारा मंदराचल पर्वत को मथनी बनाकर, सर्पराज वासुकी का रस्सी सदृश उपयोग करके सागर-अन्वेषण हेतु समुद्र-मंथन आरम्भ किया गया था। देवता और दानव लोग अपार उत्साह से समुद्र को मथने में जुटे हुए थे। देव-दानवों की संगठनात्मक शक्ति के आगे रत्नाकर को झुकना पड़ा। क्रमशः श्री, रंभा, विष, वारुणी, अमिय, शंख, धनु, गजराज, धन्वन्तरि, धेनु, तरु, शशि, मणि और बाजि इन चौदह रत्नों के साथ अन्त में भगवान धन्वंतरि अमृत का कलश हाथों में लिए बाहर आ गये। अमृत-प्राप्ति से चारों ओर प्रसन्नता का वातावरण छा गया। देव-दानवों का श्रम सफल हो जाने से वे अपनी थकान भी भूल चुके थे। इधर देवता चिन्तित होने लगे कि यदि राक्षस अमृतपान कर लेंगे तो वे सदैव देवताओं को कष्ट देते रहेंगे। इसलिए अमृतपान करने का अवसर असुरों को प्राप्त न हो यह सोचकर देवताओं ने देवराज इन्द्र के पुत्र जयन्त को संकेत किया और जयन्त अमृत-कुंभ लेकर गगन में उड़ चला।

राक्षसों के गुरु शुक्राचार्य ने देवताओं की यह युक्ति जान ली। उन्होंने दैत्यों से जयंत का पीछा करने को कहा। देवता अमृतपान करके अमर न हो जायें इस भावना से प्रेरित होकर राक्षसों ने जयन्त का पीछा किया और इसके फलस्वरूप देव-दानवों का भयंकर संग्राम छिड़ गया। कहते हैं कि यह संग्राम देवताओं के १२ दिन अर्थात् मनुष्यों के १२ वर्षों तक चला था।

जयन्त ने इस अवसर पर अमृत-कुंभ को जगह-जगह पर छुपाया और देवताओं को भी स्थानान्तरित किया। इन १२ वर्षों के भीषण संग्राम में जयन्त चार स्थानों पर दानवों की पकड़ में आ गया था। आपसी संघर्ष और छीना-झपटी में अमृत की कुछ बूँदें इन्हीं स्थानों पर छलक पड़ी थीं। ये स्थान हैं मृत्युलोक में भारतवर्ष के प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन।

अमृतकुंभ का हरण करने के लिए दानवों ने सम्पूर्ण शक्ति लगा दी थी किन्तु देवताओं के संगठन एवं कूट चालों ने उन्हें सफल होने नहीं दिया।

अमृत-कलश के संरक्षण में देवों में से सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति का विशेष सहयोग रहा था। चन्द्र ने कलश को गिरने से बचाया, सूर्य ने उसे फूटने से बचाया और बृहस्पति (गुरु) ने असुरों के हाथों में जाने से बचाया।

चन्द्रः प्रस्रवणाद् रक्षां सूर्यो विस्फोटनाद् दधौ।
दैत्येभ्यश्च गुरु रक्षां सौरिदेवेन्द्रजाद्भयात् ॥

इस कारण सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति इन तीनों ग्रहों की जिन विशिष्ट परिस्थितियों में कुंभ में से अमृत की बूँदें पृथ्वी के जिन चारों स्थानों पर छलकी थीं, उन्हीं चारों स्थानों पर ग्रहों के विशिष्ट योग के अवसर पर कुंभ-पर्व मनाने की परम्परा है। प्रयाग, हरिद्वार, नासिक तथा उज्जैन वे ही चार तीर्थराज हैं। धार्मिक जगत का यह दृढ़ विश्वास है कि अमृत-कलश से छलकी बूँदों से ये तीर्थ तथा यहाँ की पवित्र नदियाँ गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी तथा क्षिप्रा अमृतमयी हो गई हैं।

अन्त में इस भीषण संग्राम को समाप्त करने के लिए भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण किया और अपने ही वर्ग देवों को अमृत का पान करा दिया।

हरिद्वार कुम्भ-पर्व के लिए स्कन्द पुराण में गुरु, चन्द्र तथा सूर्य की राशियों के लिए प्रमाण प्राप्त होता है :

कुम्भराशिगतेजीवे याद्धनेमेषगो रविः।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम् ॥
पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गंगद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामात्तदोत्तमैः ॥

कुम्भ राशि के गुरु में जब मेष का सूर्य आवे तब हरिद्वार में कुंभ-पर्व होता है।

❀

होली हुई तब जानिए

[१२ मार्च, होली पर विशेष]

श्री भोलेबाबा ने 'वेदान्त छंदावली' में कहा है :

होली हुई तब जानिए, संसार जलती आग हो।
सारे विषय फीके लगें, नहीं लेश उनमें राग हो ॥
हो शांति कैसे प्राप्त निश दिन, एक यह ही ध्यान हो।
संसार दुःख कैसे मिटे, किस भाँति से कल्याण हो ॥

इस होली के उत्सव से मानव जाति ने बहुत कुछ लाभ उठाया है। इस उत्सव में लोग एक-दूसरे को अपने-अपने रंग से रंगकर, मन की दूरी को मिटाकर, एक-दूसरे के नजदीक आते हैं। वैरभाव को भूलकर आनंद और उल्लास जगाते हैं। यह उत्सव जीवन में नया रंग लाने का उत्सव है। आनंद जगाने का उत्सव है... छोटे-बड़े का भेद मिटाकर सब अभेद आनंद के अधिकारी बनें इसमें मदद करनेवाला उत्सव है। **परस्पर देवो भव** की भावना जगानेवाला उत्सव है... विकारी भावों पर धूल डालने एवं निर्विकारी नारायण का प्रेम जगाने का उत्सव है... लोगों के मन के खटकाव को दूर करके परस्पर सुहृदता जगाने का उत्सव है... नकली सुखों को, नकली रंगों को हटाकर असली सुख पाने का, असली रंग में रंगने का उत्सव है।

मीरा ने भी कहा है :

श्याम पिया ! मोरी रंग दे चुनरिया।
ऐसी रंग कि रंग नाहीं छूटे,
धोबी धोये चाहे सारी उमरिया...

हमारी इन्द्रियों पर, हमारे तन पर, हमारे मन पर संसार का रंग पड़ता है और उतर जाता है लेकिन भक्ति और ज्ञान का रंग अगर भूल से भी पड़ जाये तो मृत्यु के बाप की भी ताकत नहीं कि उस भक्ति और ज्ञान के रंग को हटा सके। इसी भक्ति और ज्ञान के रंग में खुद को रंगने का पर्व है होली।

होली हुई तब जानिए पिचकारी गुरुज्ञान की लगे।
सब रंग कच्चे जाय धुल एक रंग पक्के में रंगे ॥

❀

❀ गुरुभक्ति व गुरुसेवा ये साधनारूपी नौका की दो पतवारें हैं। उनकी मदद से शिष्य संसार-सागर को पार कर सकता है।

❀ इच्छारहित हो जाना यही निर्वाण है और इच्छायुक्त होना ही बंधन है। अतः यथाशक्ति इच्छा को जीतना चाहिए। इच्छा के शमन से परमपद की प्राप्ति होती है।

अमृत-कलश के संरक्षण में देवों में से सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति का विशेष सहयोग रहा था। चन्द्र ने कलश को गिरने से बचाया, सूर्य ने उसे फूटने से बचाया और बृहस्पति (गुरु) ने असुरों के हाथों में जाने से बचाया।

चन्द्रः प्रस्रवणाद् रक्षां सूर्यो विस्फोटनाद् दधौ ।
दैत्येभ्यश्च गुरु रक्षां सौरिदेवेन्द्रजाद्भयात् ॥

इस कारण सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति इन तीनों ग्रहों की जिन विशिष्ट परिस्थितियों में कुंभ में से अमृत की बूँदें पृथ्वी के जिन चारों स्थानों पर छलकी थीं, उन्हीं चारों स्थानों पर ग्रहों के विशिष्ट योग के अवसर पर कुंभ-पर्व मनाने की परम्परा है। प्रयाग, हरिद्वार, नासिक तथा उज्जैन वे ही चार तीर्थराज हैं। धार्मिक जगत का यह दृढ़ विश्वास है कि अमृत-कलश से छलकी बूँदों से ये तीर्थ तथा यहाँ की पवित्र नदियाँ गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी तथा क्षिप्रा अमृतमयी हो गई हैं।

अन्त में इस भीषण संग्राम को समाप्त करने के लिए भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण किया और अपने ही वर्ग देवों को अमृत का पान करा दिया।

हरिद्वार कुम्भ-पर्व के लिए स्कन्द पुराण में गुरु, चन्द्र तथा सूर्य की राशियों के लिए प्रमाण प्राप्त होता है :

कुम्भराशिगतेजीवे याद्धनेमेषगो रविः।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम्॥
पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गंगद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामात्तदोत्तमैः॥

कुम्भ राशि के गुरु में जब मेष का सूर्य आवे तब हरिद्वार में कुंभ-पर्व होता है।

❀

होली हुई तब जानिए

[१२ मार्च, होली पर विशेष]

श्री भोलेबाबा ने 'वेदान्त छंदावली' में कहा है :

होली हुई तब जानिए, संसार जलती आग हो।
सारे विषय फीके लगें, नहीं लेश उनमें राग हो॥
हो शांति कैसे प्राप्त निश दिन, एक यह ही ध्यान हो।
संसार दुःख कैसे मिटे, किस भाँति से कल्याण हो॥

इस होली के उत्सव से मानव जाति ने बहुत कुछ लाभ उठाया है। इस उत्सव में लोग एक-दूसरे को अपने-अपने रंग से रंगकर, मन की दूरी को मिटाकर, एक-दूसरे के नजदीक आते हैं। वैरभाव को भूलकर आनंद और उल्लास जगाते हैं। यह उत्सव जीवन में नया रंग लाने का उत्सव है। आनंद जगाने का उत्सव है... छोटे-बड़े का भेद मिटाकर सब अभेद आनंद के अधिकारी बनें इसमें मदद करनेवाला उत्सव है। **परस्पर देवो भव** की भावना जगानेवाला उत्सव है... विकारी भावों पर धूल डालने एवं निर्विकारी नारायण का प्रेम जगाने का उत्सव है... लोगों के मन के खटकाव को दूर करके परस्पर सुहृदता जगाने का उत्सव है... नकली सुखों को, नकली रंगों को हटाकर असली सुख पाने का, असली रंग में रंगने का उत्सव है।

मीरा ने भी कहा है :

श्याम पिया ! मोरी रंग दे चुनरिया।
ऐसी रंग कि रंग नाहीं छूटे,
धोबी धोये चाहे सारी उमरिया...

हमारी इन्द्रियों पर, हमारे तन पर, हमारे मन पर संसार का रंग पड़ता है और उतर जाता है लेकिन भक्ति और ज्ञान का रंग अगर भूल से भी पड़ जाये तो मृत्यु के बाप की भी ताकत नहीं कि उस भक्ति और ज्ञान के रंग को हटा सके। इसी भक्ति और ज्ञान के रंग में खुद को रंगने का पर्व है होली।

होली हुई तब जानिए पिचकारी गुरुज्ञान की लगे।
सब रंग कच्चे जाय धुल एक रंग पक्के में रंगे॥

❀

❀ गुरुभक्ति व गुरुसेवा ये साधनारूपी नौका की दो पतवारें हैं। उनकी मदद से शिष्य संसार-सागर को पार कर सकता है।

❀ इच्छारहित हो जाना यही निर्वाण है और इच्छायुक्त होना ही बंधन है। अतः यथाशक्ति इच्छा को जीतना चाहिए। इच्छा के शमन से परमपद की प्राप्ति होती है।

आध्यात्मिक और भौतिक विकास

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मनुष्य के जीवन में भौतिक विकास जितना जरूरी है उतना ही आध्यात्मिक विकास भी जरूरी है। वास्तव में तो भौतिक विकास उन्हीं के जीवन में शोभा देता है जिनके जीवन में हरिरस का, आध्यात्मिकता का विकास हुआ है। आध्यात्मिक रस को भूलकर केवल भौतिक विकास में लगा रहे तो मानव समाज विनाश की ओर जाने लगेगा। अगर आध्यात्मिक विकास को भूलकर भौतिक विकास को ही महत्त्व दिया तो आज जैसी भौतिक दृष्टि से विकसित देशों की दुर्दशा है वैसी ही दुर्दशा अन्य देशों की भी हो जायेगी।

> *जो परमात्मा की शरण में जाता है उसको परमात्मा से रस मिलता है और जो उसकी शरण छोड़ता है उसको अनेक की, विकारों की शरण जाना पड़ता है और फिर उसका चित्त उद्विग्न और अशांत हो जाता है।*

वर्षों पहले जापान में एक अंध परम्परा चली कि साधु-संत, मठ-मन्दिर सब निष्क्रिय प्रवृत्तियाँ हैं। उनमें कोई सार नहीं है। सक्रियता पर भार रखकर 'उत्पादन' ही परम लक्ष्य बनाया गया। वहाँ कानून पास हो गया कि : 'जो पूजास्थल हैं उनको फैक्टरियों में बदल दिया जाये और उनके महंत-मंडलेश्वरों को मैनेजर का पद दिया जाये। बाकी के लोगों से भी काम लिया जाये।'

> *भौतिक सुविधाएँ केवल शरीर को सँवार सकती हैं लेकिन भीतर की शान्ति और आनन्द नहीं दे सकती।*

हुआ भी ऐसा ही। करीब सालभर जापान में उसी अंधाधूंधी का प्रभाव रहा। वे लोग बड़ी आशा रखते थे कि इस बार उत्पादन दुगना होगा लेकिन उत्पादन पिछले ४ वर्षों की अपेक्षा ५० % ही हुआ। ऐसा क्यों हुआ ?

कुछ बुद्धिमान मनोवैज्ञानिकों ने जाँच-पड़ताल करके यह निष्कर्ष निकाला कि पहले मनुष्य के कर्म करने के पीछे भगवान का हाथ था। मनुष्य मंदिरों में प्रार्थना करके अपना दुःख हलका कर लेता था। अब पूजास्थलों को हटा दिया गया है जिससे मनुष्य का मन निराधार हो गया है।

उसकी मर्जी में अपनी मर्जी मिलाने की, उसके साथ नाता जोड़ने की, उससे शांति पाने की जो धारा थी, नास्तिकों ने, निगुरों ने उस धारा से मानव को काट दिया। कल-कारखाने बढ़ गये लेकिन अशान्त मानव, दुःखी-उद्विग्न मानव कारखानों में क्या कर सकता था ? उनमें आपस में संघर्ष हुआ, झगड़े हुए और उत्पादन दुगना होने के बजाय आधा हो गया।

इसी तरह जब कोई बीमारी होती है तो भगवान का स्मरण-चिंतन करने से एवं भगवद् भाव से मरीज को मदद मिलती है और कुछ मदद औषधियों से मिलती है, इस तरह बीमारी ठीक हो जाती है। इस बात को तो डॉक्टर भी स्वीकार करते हैं कि 'हमने प्रयत्न तो किया लेकिन अब हमारे हाथ में कुछ नहीं है। अब तो जो भगवान की मर्जी होगी वही होगा।' अन्त में भगवान को ही मरीज के लिए सान्त्वना देने का आधार बनाया जाता है।

यह बात मनोवैज्ञानिकों को समझ में आयी कि मनुष्य के काम करने के पीछे जब भगवान का आधार होता है तभी वह सफल होता है। अतः जापानियों ने फिर से मंदिर वगैरह बनवाकर आध्यात्मिकता का फायदा लिया और वैदिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया।

मनुष्य के जीवन का जो आधार है, जो सचमुच में सर्वाधार है, उस परमात्मा की खबर, उसका अस्तित्व अगर जीवन में से निकाल दिया जाये तो मनुष्य पशु और दैत्य से भी बदतर प्राणी हो जाता है। अगर आध्यात्मिक रस से मनुष्य को दूर कर दिया जाये तो वह राक्षसी प्रवृत्तिवाला हो जायेगा। जो लोग आध्यात्मिक रस से वंचित हैं वे ही लोग कुत्तों और बकरों की तरह क्लबों में कामुक चेष्टाएँ करते हैं। इतना ही नहीं, वे लोग इतनी बुरी तरह से अशान्त और खिन्न हो जाते हैं कि आत्महत्या तक कर बैठते हैं।

अगर आध्यात्मिक रस से मनुष्य को दूर कर दिया जाये तो वह राक्षसी प्रवृत्तिवाला हो जायेगा। जो लोग आध्यात्मिक रस से वंचित हैं वे ही लोग कुत्तों और बकरों की तरह क्लबों में कामुक चेष्टाएँ करते हैं। इतना ही नहीं, वे लोग इतनी बुरी तरह से अशान्त और खिन्न हो जाते हैं कि आत्महत्या तक कर बैठते हैं।

जो एक की शरण में जाता है, परमात्मा की शरण में जाता है उसको एक से, परमात्मा से रस मिलता है और जो उस एक की शरण छोड़ता है उसको अनेक की, विकारों की शरण जाना पड़ता है और फिर उसका चित्त उद्विग्न और अशांत हो जाता है।

धनभागी हैं वे जो भौतिक सुविधाओं के बीच भी अपनी कमी को पूरा करने के लिए परमात्मा की शरण में जाते हैं, पूर्ण पुरुषों को, सच्चे संतों को खोज लेते हैं और उनके चरणों में शीश झुकाते हैं। वे लोग बड़े ही अभागे हैं जो अपनी कमी को पूरा करने के लिए शराब, कबाब और बुरे कर्मों का सहारा लेते हैं।

आज भी दुनिया में जहाँ-जहाँ अच्छे नेता हैं, ऑफिसर हैं या व्यापारी हैं, उनके द्वारा जहाँ भी सत्य का, सदाचार का, मानवीय हित का चिंतन और प्रवृत्ति दिखाई देती है उसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध महापुरुषों और भगवान के साथ है तभी वे समाज में सुखद कार्य करते हैं।

भौतिक सुविधाएँ केवल शरीर को सँवार सकती हैं लेकिन भीतर की शान्ति और आनन्द नहीं दे सकती। जिसने भौतिक विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक विकास की ओर ध्यान दिया है वही सरलता के साथ आगे बढ़ सका है। भौतिक विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक विकास नितान्त जरूरी है।

❀

(पृष्ठ १७ का शेष)

मजा लेता है और मरने का भी मजा लेता है।

आप भी मजे से जीना और मरना चाहते हो, इस जीवन में सुखी होना चाहते हो और मरने के बाद भी सुखी होना चाहते हो तो कृपा करके जीवन जीने की कला सीख लो और मरने की भी कला सीख लो।

आपको एक गाँव से दूसरे गाँव जाना पड़ता है तो थोड़ा सामान बाँध लेते हो, थोड़ी-बहुत तैयारी कर लेते हो। इस संसार से आपको एक दिन तो जाना ही है अतः उसके लिए भी थोड़ी तैयारी कर लेनी चाहिए। आप सेवा, सत्कर्म, सद्विचार, सत्संग, सत्यस्वरूप परमात्मा के नाम-जप और परमात्मा के ध्यान-चिंतन का सामान बाँध लो ताकि जब भी जाना पड़े तब बंधनमुक्त होकर जा सको। हे निष्पाप मुक्तात्मा ! अपने मुक्त स्वभाव को जान लो...

❀

✻ गुरु बिल्कुल हिचकिचाहट से रहित, निःशेष एवं सम्पूर्ण आत्मसमर्पण के सिवाय और कुछ नहीं चाहते। जैसे प्रायः आजकल के शिष्य करते हैं वैसे आत्मसमर्पण केवल शब्दों की बात ही नहीं होना चाहिए।

✻ शिष्य जब गुरु में श्रद्धा खो देता है तब उसका जीवन उजाड़ मरुभूमि जैसा बन जाता है। साधक जब गुरु में श्रद्धा खो बैठता है तब उसके जीवन का वैभव नष्ट हो जाता है।

- श्री स्वामी शिवानन्दजी

जीने-मरने की कला

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

भगवान श्रीकृष्ण के कहने से पितामह भीष्म ने बाणशय्या पर रहकर भी युधिष्ठिर को उपदेश दिया और जीवन जीने की कला सिखायी। आखिर में अपना चित्त सच्चिदानंद परमात्मा में लगाया और शरीर छोड़ दिया।

प्रत्येक मनुष्य को जीवन जीने की कला सीख लेनी चाहिए और मौत आए उसके पहले मरने की कला भी सीख लेनी चाहिए। जो जीवन जीने की कला नहीं सीख पाता है वह जीवनभर भारी दुःख उठाता है और जो मरने की कला नहीं सीख पाता है वह बार-बार मरता रहता है।

आप जीवन में सुख-शांति चाहते हो तो आपको दया, प्रेम, क्षमा, परदुःखकातरता आदि सद्गुणों का विकास करना चाहिए और मरकर भी अमर होना चाहते हो तो अमर आत्मा का ज्ञान पाना चाहिए।

जीवन में क्षमा का गुण लाने से सुख-शांति अपने-आप आ जाती है। आप अपने घर में हो चाहे नौकरी-धंधे में हो, अगर कभी किसीसे कुछ गलती हो जाए तो उसे क्षमा कर देना चाहिए। घर में बहू से कोई गलती हो जाए तो सास को उसके प्रति द्वेष की गाँठ नहीं बाँधनी चाहिए वरन् प्रतिशोध की भावना रखे बिना मातृहृदय की उदारता से, प्रेम से उसे समझाना चाहिए तो दुबारा गलती होने की संभावना कम हो जाती है। अगर सास की कोई बात बहू को नहीं जँचती है तो विनम्रता से अपनी बात बताकर मामला हल कर लेना चाहिए, न कि सास के प्रति द्वेष की गाँठ बाँधनी चाहिए। ऐसे ही देवरानी-जेठानी के बीच या भाई-भाई के बीच या बाप-बेटे के बीच या पड़ोसी-पड़ोसी के बीच कुछ अनबन हो जाए तो उदारता और क्षमा का व्यवहार करना चाहिए।

कभी ऐसा भी होता है कि किसी कारणवश किसीका 'मूड' खराब हो गया हो, 'मूड ऑफ' हो गया हो तो व्यवहार में जरा गड़बड़ हो जाती हैं। उस वक्त सामनेवाला अपने चित्त को समता में रखकर मामला सँभाल लेता है तो बात वहीं पर रुक जाती है लेकिन सामनेवाला भी वैसे ही उत्तेजना-आवेश में आ जाता है तब बात बढ़ जाती है।

> *जो आपको अपने लिए अच्छा नहीं लगता है, अनुकूल नहीं लगता है वैसा व्यवहार दूसरों के प्रति न करो। आप अपने लिए जो चाहते हैं वही आप दूसरों को दो। आपके लिए वही बचेगा। आप जो देते हैं वही घूम-फिर के आपके पास आता है।*

अगर किसी पत्नी को उसके पति ने कुछ कहा हो या पत्नी से पति की अनबन हो गई हो तब वह फरियाद के रूप में अपनी सहेली से या मित्र से कहने लगती है कि 'हमेशा तो ठीक से बातचीत करते हैं। इतनी गलती भी नहीं थी फिर भी नाराज हो गए और ऐसा-वैसा बोलने लगे। ऐसा करना चाहिए क्या ?' अरे... ! नाराज हो गए तो हो गए। कोई भी आदमी हमेशा अच्छी तरह से बात करे ऐसा किसने कहा ? मन है, कभी नाराज भी होगा, कभी राजी भी होगा... कभी कोई ठीक से बात करे और कभी ऐसा-वैसा बोल दे तो हमें चाहिए कि खुद को सँभालें। अपनी ओर से सामनेवाले को दुःख के वचन न सुनाएँ। सामनेवाले का तो चित्त उद्विग्न हुआ हो ६० प्रतिशत और ४० प्रतिशत हम भी गुस्सा करें तो १०० प्रतिशत हो जाएगा। फिर तो पड़ोसी भी खिड़की से झाँकने लगेंगे कि 'भाई ! क्या हुआ ?' घर में ही युद्धक्षेत्र ! ऐसा क्यों होता है ?... क्योंकि जीने की कला नहीं जानते हैं। अपने पास जो

कुछ होता है उसमें सबकी आसक्ति होती है। पति कहता है : 'ऐसा ही होना चाहिए' और पत्नी कहती है : 'ऐसा ही होना चाहिए।' ऐसे ही सास-बहू हो, भाई-भाई हो, देवरानी-जेठानी हो, भाभी-ननद हो, सबकी अपनी-अपनी मान्यता होती है कि 'यही ठीक है... उसे ऐसा करना चाहिए'- ऐसी अकड़ में आ जाते हैं आमने-सामने और फिर हो जाता है झगड़ा। बात तो जरा-सी होती है परंतु उसमें सबकी पकड़ होती है, आसक्ति होती है, आग्रह होता है इसलिए झगड़े हो जाते हैं। 'ऐसा ही होना चाहिए' का आग्रह होता है तथा उसमें कोई विघ्न डालता है और विघ्न डालनेवाला यदि छोटा होता है तो क्रोध होता है और बड़ा होता है तो भय होता है।

जो दूसरों को स्नेह, आनंद और निर्भीकता देता है वह अनंतगुना स्नेह और आदर पा लेता है। साधारण मनुष्यों में और महापुरुषों में इतना ही फर्क होता है कि वे प्रकृति के नियम के अनुसार परमात्मा के आश्रय में जीते हैं और साधारण मनुष्य स्वार्थपरायण होकर अज्ञानवश सुखी होने के लिए अंधी दौड़ लगाता है।

सारे झगड़े और सारी मुसीबतों का कारण क्या है ? बाहर के जगत के व्यवहार को अपनी वासनाओं की डोर से बाँध रखने का जो आग्रह है उससे ही क्लेश होता है, दुःख पैदा होता है। मैं तो आपसे यह कहता हूँ कि दुःख पैदा ही न हो उसकी सावधानी रखनी चाहिए और साथ में यह भी कहता हूँ कि दुःख पैदा न हो उसकी सावधानी रखना भी इतना आसान नहीं है।

आपका मन सुख चाहता है और सुख भी कैसा ? स्थायी सुख। कुछ भी करके आप सुख चाहते हो इसलिए आग्रह रखते हो। किसीको सताने के लिए आप आग्रह नहीं रखते हो वरन् सुख के लिए आग्रह रखते हो कि 'ऐसा करूँ तो मुझे सुख मिले... ऐसा हो तब मुझे सुख मिले...' यह परिस्थितियों को अनुकूल बनाने का जो आग्रह है इसकी गहराई में

जितना आप ईश्वर की शरण होते जाओगे उतना ईश्वरमय होते जाओगे। जितना ईश्वरमय होते जाओगे उतना भीतर का सुख पा लोगे और बाहर की परिस्थितियों का आग्रह करके सुख पाने की बेवकूफी छूट जाएगी।

देखो तो सुख की इच्छा का रूपांतर ही है।

अच्छा, तो अब क्या करें ? किसी भी वस्तु या परिस्थिति का आग्रह न रखें। लेकिन भीतर सुख की इच्छा है और जब तक सुख नहीं मिलता तब तक इच्छा भी नहीं मिटती है तो फिर क्या करें ? हम **'मन्मया'** हो जाएँ। 'वाह प्रभु ! तेरी मर्जी पूरण हो।' जो हुआ अच्छा हुआ, जो होगा अच्छा ही होगा। जितना आप ईश्वर की शरण होते जाओगे उतना ईश्वरमय होते जाओगे। जितना ईश्वरमय होते जाओगे उतना भीतर का सुख पा लोगे और बाहर की परिस्थितियों का आग्रह करके सुख पाने की बेवकूफी छूट जाएगी।

बाहर की वस्तुओं का या परिस्थितियों का जो आग्रह है, आकर्षण है वह हमें भय, शोक, क्रोध और जिम्मेदारी में घसीट लाता है। जिससे सब शोभायमान हो रहा है उस परम प्यारे के आकर्षण का पता नहीं इसलिए इन बाहरी आकर्षणों में हम हस्ताक्षर कर बैठते हैं और बाहरी आकर्षणों में हस्ताक्षर कर लेते हैं तो **'मन्मया'** नहीं हो पाते हैं। **'मन्मया'** नहीं हो पाते हैं इसलिए सारे दुःख और मुसीबत आ टपकते हैं।

बाहर मिलता सो मिले, अंतर सबसों एक।

ऐसा ज्ञान और विवेक बनाए रखें। बाहर का मिलना-जुलना ठीक है लेकिन अंदर में समझें कि 'ये सब स्वप्न है। ये सब आने-जानेवाली परिस्थितियाँ हैं। मेरा तो मिलनहार वही है मेरा कृष्ण तत्त्व, मेरा राम तत्त्व, मेरा गुरु तत्त्व, मेरा आत्मतत्त्व...' ऐसा अगर सजगता से भान रहे तो भय, शोक, राग और क्रोध आदि क्षीण होता जाएगा। जितना-

जितना भय, राग और क्रोध दूर होता जाएगा उतने-उतने आप **'मन्मया'** होते जाओगे।

यह बात ठीक से समझ लेना। बात जरा सूक्ष्म है। सेवा-सत्कर्म करना अच्छा है लेकिन उसमें भी कुछ-न-कुछ बाहर की वस्तुओं की पराधीनता रहती है। धन की, सेवा लेनेवाले की, सेवा करनेवाले तन की, सेवा करने का निर्णय करनेवाली बुद्धि की तो पराधीनता बनी ही रहती है। पूर्ण सुख तो यहाँ भी नहीं मिलता है। पूर्ण सुख तब मिलता है जब पूर्ण तत्त्व का बोध हो जाता है। पूर्ण स्वतंत्रता तब मिलती है जब पूर्ण आत्मा का 'मैं' रूप में साक्षात्कार हो जाता है। गीताकार भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है :

बाहर के जगत के व्यवहार को अपनी वासनाओं की डोर से बाँध रखने का जो आग्रह है उससे ही क्लेश होता है, दुःख पैदा होता है।

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।

योग में आरूढ़ होना है तो निष्काम कर्म करो। निष्काम कर्म करने से हृदय शुद्ध होगा और हृदय शुद्ध होने लगे तो उसमें से समय बचाकर ध्यान-साधना करो। ध्यान करते-करते ध्यान में जब आगे बढ़ो तो फिर सांख्य को ले आओ, विवेक-विचार को ले आओ और आत्म-साक्षात्कार करके मुक्त हो जाओ।

मनुष्य की बड़े-में-बड़ी गलती यह है कि भीतर का सुख जगाने के बदले बाहर की, वस्तु से, व्यक्ति से, परिस्थिति से सुख चाहता है। वह चाहता है कि 'सब मुझे सुख दें, माने दें...' लेकिन सुख और मान लेने की चीज नहीं है, देने की चीज है। सबके भीतर सुख का भण्डार भरा पड़ा है। उसे प्रगट करने की कला सीख लो। दूसरों को सुख दो तो आपको सुख अपने-आप मिल जाएगा।

आप जीवन में सुख-शांति चाहते हो तो आपको दया, प्रेम, क्षमा, परदुःखकातरता आदि सद्गुणों का विकास करना चाहिए और मरकर भी अमर होना चाहते हो तो अमर आत्मा का ज्ञान पाना चाहिए।

आराम दे, आराम ले, दुःखदर्द दे, दुःखदर्द ले।

व्यवहार में आपको यही सावधानी रखनी है।

आत्मनि प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

जो आपको अपने लिए अच्छा नहीं लगता है, अनुकूल नहीं लगता है वैसा व्यवहार दूसरों के प्रति न करो। आप अपने लिए जो चाहते हैं वही आप दूसरों को दो। आपके लिए वही बचेगा। आप जो देते हैं वही घूम-फिर के आपके पास आता है। आप सुख चाहते हो, मान चाहते हो तो दूसरों को सुख दो, मान दो। आप मुसीबत चाहते हो तो दूसरों को मुसीबत में डालो। Every action creats reaction. जैसी ध्वनि वैसी प्रतिध्वनि।

जिसके हृदय में क्षमा का गुण नहीं है और प्रतिशोध की आग में तपता है वह जीवनभर शत्रुओं से घिरा रहता है। जो दूसरों को दुःखी करके खुद सुखी होने की कोशिश करता है उसको कभी दुःख से छुटकारा नहीं मिल सकता। जो दूसरों के अपमान में और अपने सम्मान में लगा है वह अपमान की आग से बच नहीं सकता। जो दूसरों को सताकर खुद आराम से जीना चाहता है वह परेशानी के चक्कर से छूट नहीं सकता। प्रकृति का यह अकाट्य सिद्धांत है। प्रकृति में जो व्यवस्था है वह सबके लिए एक है। गुलाब का फूल गुलाबी क्यों है ? क्योंकि उसने सूर्य के और सब रंग अपने में रखे और गुलाबी रंग लौटाता रहा तो उसके पास गुलाबी रंग रह गया। जो लौटाया वही अपने लिए रह गया।

जो दूसरों को स्नेह, आनंद और निर्भीकता देता है वह अनंतगुना स्नेह और आदर पा लेता है। साधारण मनुष्यों में और महापुरुषों में इतना ही फर्क होता है कि वे प्रकृति के नियम के अनुसार परमात्मा के आश्रय में जीते हैं और साधारण मनुष्य स्वार्थपरायण होकर अज्ञानवश सुखी होने के लिए अंधी दौड़ लगाता है। महापुरुषों को प्रेम, आनंद, माधुर्य, प्रसन्नता, आदर सहज में मिल जाता

है और साधारण मनुष्य को दुःख, परेशानी व चिंता हाथ लगती है।

दूसरों के प्रति बाहर का व्यवहार करते समय तो सावधानी रखनी ही चाहिए तथा साथ-साथ अपने भीतर को भी सँवारना चाहिए। जितनी भीतर की समझ ठीक होगी उतना ही बाहर का व्यवहार अपने-आप ठीक होता जाएगा, सुधरता जाएगा। प्रकृति का नियम है 'उन्नति'। आदमी अपने-आप नहीं सुधरता है तो मार खाकर भी, डंडे खाकर भी सुधरना पड़ता है। चाहे फिर नरक में डालकर या अन्य योनियों में डालकर भी सुधारने की प्रक्रिया जारी रहती है। आगे बढ़ो, आगे बढ़ो, नहीं तो मरो, मरो और मरो। फिर हम प्रकृति के नियम के अनुकूल ही क्यों न चलें ? अपने आपको उन्नत बनाने के बजाय नरकों में क्यों ले जाएँ ?

जो जीवन जीने की कला नहीं सीख पाता है वह जीवनभर भारी दुःख उठाता है और जो मरने की कला नहीं सीख पाता है वह बार-बार मरता रहता है।

आप पहली कक्षा में पढ़ते हो तब तो ठीक है लेकिन आप फिर-फिर से पहली ही कक्षा में रहते हो तो प्रकृति के नियम का उल्लंघन होता है। अगर कोई बच्चा आठवीं कक्षा में है और आठवीं की किताबें पढ़ता है तो स्कूल के नियमानुसार ठीक है किन्तु अगर वह आठवीं की किताब छोड़कर पहली की किताब पढ़ने बैठ जाए या आठवीं की छोड़कर बारहवीं की या पी. एच. डी. की किताब पढ़ने की इच्छा करे तो वह गलत है, अनुचित है। आप जिस अवस्था में हो उसी अवस्था में उचित व्यवहार करके उन्नत होते जाओ। आप जिस अवस्था में हो उस अवस्था को छोड़कर दूसरे को पाने की चेष्टा में लग जाते हो तो दुःख पाते हो। जिस वक्त जो मिल जाये उसे ईश्वर की प्रसन्नता के निमित्त किया जाये तो आप आसानी से उन्नत होते जाओगे।

जीवन में क्षमा का गुण लाने से सुख-शांति अपने-आप आ जाती है।

किन्तु... घर का काम मिला है तो उससे ऊबकर नौकरी करने की सोचते हो। नौकरी के समय पिक्चर देखने की इच्छा रखते हो। पिक्चर देखते वक्त घर का चिंतन करते हो। घर में होते हो तब कहीं और का चिंतन चलता रहता है इससे गड़बड़ पैदा होती है।

भोजन बनाना है तो बड़े चाव से बनाओ। 'मैं अपने पति के रूप में, बाल-बच्चों के रूप में, भाई-बहन, माता-पिता या अतिथि किसीके भी रूप में साक्षात् नारायण को जिमाऊँगी...' - इस भाव से स्त्री यदि भोजन बनाए तो उसका भोजन बनाना भी पूजा हो जाएगा। झाड़ू लगाना है तो भी बड़े चाव से लगाओ, नौकरी-धंधा करते हो तो भी बड़े चाव से करो लेकिन ऐसा नहीं कि दिनभर झाड़ू ही लगाते रहो, भोजन ही बनाते रहो, घर सँभालते रहो या जीवनभर नौकरी-धंधा करते रहो। कूप-मंडूक बने रहो या चूहे की नाईं घर में पड़े रहो। ऐसा भी नहीं होना चाहिए। घर भी सँभालो, नौकरी-धंधा भी सँभालो पर इनसे समय बचाकर जप-ध्यान भी करो, सत्संग भी सुनो, साधना भी करो। अपने आत्मदेव को सँभालो और वह ऐसा सँभालो कि बाकी सब सँभाला हुआ छोड़ना पड़े तो भी फिकर न हो। जिस वक्त जो छोड़ना पड़े उसके लिए तैयार रहो। इसे कहते हैं- **'अनासक्त योग।'**

जीवन में त्याग का सामर्थ्य होना चाहिए। जिनके पास त्यागने की शक्ति है वे ही भोग भोग सकते हैं। जिनके पास भोग त्यागने की शक्ति नहीं है वे भोग भी नहीं सकते हैं। धन मिला है तो धन को सत्कर्म में लगाने का, धन को त्यागने का सामर्थ्य होना चाहिए। सत्ता पाने की इच्छा है और नहीं मिलती है तो दुःख होता है लेकिन जिनके पास सत्ता है वे सत्ता के त्याग का सामर्थ्य रखते हैं तभी सत्ता को भोग सकते हैं। त्यागने का सामर्थ्य होना चाहिए। यहाँ तक कि शरीर त्यागने का भी सामर्थ्य होना चाहिए। जब मृत्यु आए तब हिचकिचाहट करके शरीर में बैठे नहीं रहें बल्कि 'चलो, मृत्यु आयी है। यह शरीररूपी चोला बदलता रहता है। हम तो वही हैं - **'सोऽहं... शिवोऽहं...'** ऐसा करके जो जीता है, वही आदमी जीने का भी

(शेष पृष्ठ १३ पर)
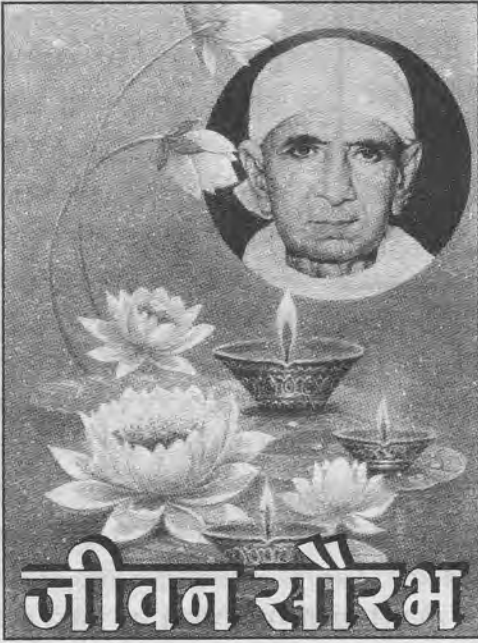
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

(गतांक का शेष)

अब लीलाराम का मन धीरे-धीरे ईश्वराभिमुख होने लगा। हर पल उनका बढ़ता जाता ईश्वरीय अनुराग, उन्हें आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर करने लगा। तन से तो वे दुकान सँभालते किंतु मन से सदैव परमात्म-प्राप्ति के लिए व्याकुल रहते।

एक बार लीलाराम बैलगाड़ी के ऊपर सामान लादकर जंगी नामक गाँव में बेचने जा रहे थे तब जीवाई नामक एक महिला ने लीलाराम के पास से थोड़ा सामान खरीदा। उसमें से तौलते वक्त एक चीज का वजन उस महिला को कम लगा। उसने तुरंत ही बालक लीलाराम को एक थप्पड़ मारते हुए कहा :

''तू सामान कम देकर हमें लूटता है ? यह तुझे आधा सेर लगता है ?''

तब लीलाराम ने शांतिपूर्वक कहा :

''माँ ! सामान तो बराबर तौलकर दिया है फिर भी तुम्हें शंका हो तो फिर से तौल दूँ ?''

लीलाराम ने सामान तौला तो उसका वजन आधे सेर की जगह पौना सेर निकला। जीवाई शरमा गयी एवं लीलाराम के पैरों पड़ी। सरल हृदय के लीलाराम को जरा भी क्रोध न आया। उलटे वे ही उस महिला से माफी माँगने लगे।

उसी दौरान् एक ऐसी ही दूसरी घटना घटी जिसे लेकर लीलाराम की जिज्ञासा ज्यादा तीव्र हो गयी।

उस गाँव में जीवा नामक एक शिकारी रहता था। अकाल का समय था। बाल-बच्चोंवाला जीवा अपने बच्चों की भूख को न मिटा सका। अनाज की गाड़ी लेकर जब लीलाराम जा रहे थे तब रास्ते में थका-हारा जीवा लीलाराम के पास आया और याचना करने लगा : ''मेरे बच्चे भूख से कुलबुला रहे हैं। थोड़ा-सा अनाज दे दें तो बच्चों को जीवनदान मिल सके।''

लीलाराम ने जीवा की लाचारी को समझा। भूख से अंदर धँसी हुई आँखें उसकी दयाजनक स्थिति का संकेत दे रही थीं। लीलाराम परिस्थिति पा गये।

वैष्णवजन तो तेने रे कहिए, जे पीड़ पराई जाणे रे...

जीवा के परिवार की ऐसी करुण स्थिति ने उन्हें हिलाकर रख दिया। क्षण का भी विचार किये बिना आधे मन अनाज से उसका थैला भर दिया।

उस जमाने में पैसे का लेन-देन बहुत कम था। छोटे-छोटे गाँवों में सामान की अदला-बदली ही ज्यादा होती थी। जीवा शिकारी चल पड़ा लखुमल की दुकान की ओर। वहाँ थोड़ा-सा अनाज देकर मिर्च-मसाले ले लिये। जब लखुमल ने जीवा से पूछा : ''तुझे अनाज कहाँसे मिला ?''

तब जीवा ने बताया : ''यह अनाज लीलाराम के पास से दान में मिला है।''

ऐसा कहकर लखुमल के आगे लीलाराम की खूब प्रशंसा करते हुए आशीर्वाद बरसाने लगा।

लखुमल विचार में पड़ गये। उन्हें हुआ कि इस बार लीलाराम का हिसाब ठीक से जाँच लेना पड़ेगा। जब लीलाराम ने हिसाब दिया तो पैसे ज्यादा आये ! लखुमल ज्यादा उलझ गये। उन्होंने लीलाराम से पूछा : ''पहले के किसीके पैसे लेने-देने के तो इस हिसाब में नहीं हैं न ?''

जब लीलाराम ने खूब सरलता से बताया कि 'किसीका भी आगे-पीछे का कोई भी हिसाब बाकी नहीं है।' तब लखुमल की उलझन और बढ़ गयी।

अब तो उनसे नहीं रहा गया। उन्होंने निश्चय किया कि जैसे भी हो, खुद जाँच किये बिना इस उलझन को नहीं सुलझाया जा सकता। दूसरी बार जब उन्होंने लीलाराम को सामान खरीदने के लिए भेजा तब वह स्वयं भी छिपकर लीलाराम की लीला को देखने लगे।

जब लीलाराम अच्छी तरह खरीदी करके वापस लौटने लगे तब रास्ते में गरीब-गुरबों, भूखे-प्यासों को अनाज बाँटने लगे। लखुमल ने लीलाराम की इस दयालुता एवं दानवृत्ति को देखा, गरीबों की तरफ उनका निष्काम भाव देखा। यह सब लखुमल छिपकर ही देखते रहे। जब लीलाराम घर पहुँचे तब लखुमल ने मानो, कुछ न हुआ हो इस प्रकार सारा हिसाब लिया तो आश्चर्य! हिसाब बराबर! सामान भी बराबर!! कहीं कोई घाटा नहीं!!!

लीलाराम अपनी उदारता एवं सरलता से खूब लोकप्रिय हो गये इसलिये दूसरे दुकानदारों को लीलाराम से ईर्ष्या होने लगी। मौका मिलते ही वे लखुमल के कान भरते : ''तुम्हारे मामा का लड़का अपनी दानवृत्ति से तुम्हें पूरा दिवालिया बना देगा। उससे सँभलना।''

तब लखुमल ने स्पष्ट करते हुए कहा :

''मैं रोज सूची के अनुसार सामान एवं पैसों की जाँच कर लेता हूँ। मुझे तो कभी भी, कहीं भी गड़बड़ नहीं दिखी। उलटे मेरा व्यापार एवं नफा दोनों बढ़ने लगा है। मैं किस प्रकार उस पर शंका कर सकता हूँ?''

लीलाराम की सहृदयता एवं परोपकार की वृत्ति को देखकर लखुमल के हृदय में लीलाराम के लिए आदर एवं भक्तिभाव उदित होने लगा। खुद के द्वारा की गयी जाँच से भी लखुमल का यह विश्वास दृढ़ हो गया कि लीलाराम कोई साधारण बालक नहीं है। उसमें कई दिव्य शक्तियों का भण्डार है, बालक अलौकिक है।

लीलाराम को भी गाँव के व्यापारियों द्वारा की जानेवाली शिकायतों का अंदाज लग गया था। लखुमल कुछ न कहते और लीलाराम भी विरक्तभाव से सब घटनाओं को देखते रहते। फिर भी गहराई में एक ही चिंतन चलता रहता कि 'इस दान की कमी को पूरा करनेवाला कौन?'

उनका आकर्षण इस कमी को पूरा करनेवाले के प्रति बढ़ता गया। जिज्ञासा की तीव्रता बढ़ने लगी। लीलाराम को दृढ़ विश्वास हो गया कि 'इस ब्रह्माण्ड में कोई सबसे बड़ा दानी है जिसकी दानवृत्ति से ही सारे ब्रह्माण्ड का व्यवहार चलता है। मुझे उसी दाता प्रभु को जानना है।' मैंने कुछ दान किया है या अच्छा काम किया है- इस बात का उन्हें जरा भी अहं न था। दूसरों के हित को ध्यान में रखकर, निष्काम भाव से कर्म करनेवाले की सेवा में तो प्रकृति भी दासी बनकर हाजिर रहती है।

मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको देत हैं, क्या लागत है मोर॥

उपरोक्त चमत्कारिक घटनाओं ने लीलाराम को अधिक सजग कर दिया। उनके अंतरतम में वैराग्य की अग्नि अधिकाधिक प्रज्वलित होने लगी। अब वे अपना अधिकाधिक समय ईश्वर की आराधना में बिताने लगे।

❀

संन्यास एवं गुरुद्वार

जब कुलगुरु श्री रतन भगत ने नश्वर देह का त्याग कर दिया तब उनकी गद्दी पर उनके शिष्य टौंरमल को बैठाया गया। थोड़े समय के पश्चात् वे भी संसार से अलविदा हो गये तब शिष्यों ने लीलाराम को गद्दी पर बिठाया।

नन्हें-से लीलाराम गद्दी पर तो बैठे किन्तु उनका मन वहाँ नहीं लगता था। उनके भीतर तो निरंतर यही विचारधारा चलती थी कि 'दान देने के कारण कम हुई वस्तुओं की भरपाई करनेवाला वह कौन है, जो मेरी लाज रखता था?' उन्होंने निर्णय किया कि 'जिसने मेरी लाज रखी, जिसने खाली गोदाम

को भरा, मैं उस परमात्मा का साक्षात्कार करके ही रहूँगा । नहीं तो मेरा जीवन व्यर्थ है ।' उनकी अन्तरात्मा जागृत हो उठी । संसार के नश्वर पद एवं संबंधों को त्यागने का दृढ़ निश्चय करके वे अपनी चाची के पास आकर कहने लगे :

''माँ ! मैं परमात्मा की खोज करके उन्हें पाना चाहता हूँ । मुझे आज्ञा दीजिए ।''

चाची को यह बात सुनकर बड़ा आघात लगा । घर में एक ही कुलदीपक है और वह भी साधु बनना चाहता है ! उन्होंने बात टालने का काफी प्रयास किया किन्तु लीलाराम तो दृढ़निश्चयी थे । उनके मन पर चाची के रोने-गिड़गिड़ाने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा । आखिरकार चाची ने एक वचन लिया कि 'अंत समय में मेरी अर्थी को कंधा जरूर देना ।' कंधा देने का वचन देकर लीलाराम तो अपना परम लक्ष्य पाने के लिए घर छोड़कर निकल पड़े । जिसके हृदय में तीव्र वैराग्य हिलोरें मारता हो उसे जगत में कौन रोक सकता है ?

विवेकवान् पुरुष नश्वर उपलब्धियों से मुँह मोड़कर अपना समय परमार्थ सिद्ध करने में ही लगाते हैं । कपिलवस्तु के राजकुमार सिद्धार्थ के पास पूरा राजपाट, युवान सुंदर पत्नी, सुंदर बालक एवं भोग-विलास के सभी साधन थे । वे जब छोटे थे तब ज्योतिषियों ने भविष्यवाणी की थी कि 'यह बालक संसार का त्याग करके, संन्यासी बनकर, जगत का उद्धार करेगा ।'

राजा ने अपना इकलौता लाडला पुत्र साधु न बने इसका पहले से ही खूब ख्याल रखा था । परंतु एक दिन सिद्धार्थ को बाहर की दुनिया देखने की इच्छा हुई । वे सारथि द्वारा रथ तैयार करवाकर बाहर की दुनिया का अवलोकन करने निकले ।

मार्ग में उन्होंने कमर से झुका हुआ एक वृद्ध, एक रोगी, एक अर्थी एवं एक संन्यासी को देखा । वृद्धावस्था, रोग एवं मृत्यु को देखकर उन युवान सिद्धार्थ के मन में प्रश्न उत्पन्न हुआ कि इन दुःखों से छूटने का कोई उपाय है क्या ? तब प्रभुप्राप्ति के सिवाय उन्हें दूसरा कोई उत्तर नहीं मिला । उनका विवेक जगा कि मिले हुए शरीर के साथ का सुख-वैभव तो मृत्यु के झटके में ही चला जायेगा ।

पड़ा रहेगा माल खजाना छोड़ त्रिया सुत जाना है ।
कर सत्संग अभी से प्यारे नहीं तो फिर पछताना है ॥

उन्होंने शरीर एवं संसार के दुःखों को देखा जिनमें से किसी प्रकार छूटना संभव नहीं है । सभी जीवों को उनसे गुजरना पड़ता है । यह सोचकर उनका वैराग्य जाग उठा एवं मध्यरात्रि में ही युवान पत्नी यशोधरा एवं पुत्र राहुल को सोते हुए छोड़कर, राजपाट वगैरह का त्याग करके वे परमात्म-प्राप्ति के मार्ग पर निकल पड़े । जंगलों में जाकर घोर तपस्या करके परमात्म-शांति को पाकर महान् बन गये । आज लाखों लाखों लोग उन बुद्ध की वंदना करते हैं ।

संसार के दुःखों को देखकर सिद्धार्थ का वैराग्य जाग उठा । अपनी पत्नी के विश्वासघात ने राजा भर्तृहरि को जगा दिया ।

राजा भर्तृहरि के पास कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक का विशाल साम्राज्य था । उनकी पिंगला नाम की अत्यंत रूपवती रानी थी । राजा को रानी के ऊपर अटूट विश्वास एवं प्रेम था परंतु वह रानी राजा के बदले एक अश्वपाल से प्रेम करती थी और वह अश्वपाल भी रानी के बदले राजनर्तकी को चाहता था । वह राजनर्तकी अश्वपाल की जगह राजा भर्तृहरि को स्नेह करती थी ।

एक दिन एक योगी ने राजा को एक अमरफल दिया । राजा ने रानी के मृत्यु के वियोग के भय से उसे अमर बनाने के लिए वह फल खाने के लिए रानी को दिया । परंतु मोहवश रानी ने वह फल अश्वपाल को दे दिया । अश्वपाल ने वह फल राजनर्तकी को दे दिया । किन्तु राजनर्तकी ने जब वह फल राजा को दिया, तभी यह सारा सत्य बाहर आया । रानी की बेवफाई को देखकर राजा के पैरों तले की जमीन खिसक गयी । उनके अंतरचक्षु खुल गये । उन्होंने रनिवास, सिंहासन और राजपाट सब छोड़कर विवेकरूपी कटार से तृष्णा एवं राग की बेल को एक ही झटके में काट दिया ।

(क्रमशः)

निर्भय बनो

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जो व्यक्ति जितना निर्भय, साहसी एवं संयमी होता है उसका जीवन उतना ही अधिक सफल होता है।

चंपारण्य के किसानों को एकत्रित करके गाँधीजी ने उन लोगों में प्राणबल फूँक दिया था जिसकी वजह से एंग्लोइण्डियन लोगों ने सभा करके यह फैसला किया कि 'कैसे भी करके इस बूढ़े गाँधी को मौत के घाट उतारना पड़ेगा' और इस कार्य हेतु एक दुष्ट व्यक्ति तैयार भी हो गया।

अगर हम भीतर से निर्भय रहें तो बाहर की कोई भी परिस्थिति हमें डरा नहीं सकती। अगर हम भीतर से भयभीत रहें तो फिर बाहर अनेकों सुरक्षाकर्मी एवं अंगरक्षक रखने पर भी भीतर भय बना ही रहता है।

सायंकाल की प्रार्थना के समय किसी व्यक्ति ने आकर गाँधीजी को यह खबर दे दी कि : ''बापू! अमुक एंग्लोइण्डियन व्यक्ति ने निर्णय किया है कि वह कुछ ही दिनों में आपकी हत्या करेगा। अतः बापू! आप यहाँसे कहीं चले जाएँ तो अच्छा रहेगा। हमारा काम हम निपटा लेंगे।''

गाँधीजी ने उसकी बात को सुना-अनसुना कर दिया। प्रार्थना खत्म होते ही सब लोग अपने-अपने काम में लग गये। रात्रि के करीब १२ बजे गाँधीजी को वह एंग्लोइण्डियनवाली बात याद आ गयी। गाँधीजी रात को १२ बजे उसके घर पर पहुँच गये। उस एंग्लोइण्डियन ने पूछा :

''Who are you ? आप कौन हैं ?''

गाँधीजी : ''गाँधी।''

एंग्लोइण्डियन आदमी ने दरवाजा खोला। गाँधीजी ने उसको सिर से पैर तक निहारा और उसमें भी रोम-रोम में रमनेवाले राम की प्रतीति करने लगे।

एंग्लोइण्डियन : ''Are you Mr. Gandhi ? क्या आप मि. गाँधी हैं ?''

गाँधीजी : ''हाँ, आपने जिसकी हत्या करने का निश्चय किया है। जिसको 'जान से मार डालूँगा...' ऐसा निर्णय किया है मैं वही गाँधी हूँ। मैं अकेला ही आया हूँ। मेरे साथ न तो कोई व्यक्ति ही है और न ही मेरे पास कोई हथियार है। मेरे मित्र ! आप अपनी इच्छा पूरी कर लीजिए। मैं कोई प्रतिक्रिया नहीं करूँगा।''

इतना कहते हुए गाँधीजी ने एक प्रेमयुक्त, मधुर नजर उस पर डाली। वह एंग्लो-इण्डियन आखिर था तो मनुष्य ही। वह शर्म से पानी-पानी हो गया। उसने गाँधीजी के चरण पकड़ लिए और क्षमा माँगने लगा : ''Please excuse me. कृपया, मुझे माफ कर दीजिए। मुझसे गलती हो गयी...''

अगर हम भीतर से निर्भय रहें तो बाहर की कोई भी परिस्थिति हमें डरा नहीं सकती। अगर हम भीतर से भयभीत रहें तो फिर बाहर अनेकों सुरक्षाकर्मी एवं अंगरक्षक रखने पर भी भीतर भय बना ही रहता है।

एक दिन तो शरीर की मृत्यु होनी ही है तो फिर डरना क्यों ? जिस समय मौत आयेगी उस समय कोई भी रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकेगा फिर मृत्यु का निमित्त चाहे जो बने। और यदि बचनेवाले होंगे तो खराब-से-खराब परिस्थिति भी तुम्हारा बाल तक बाँका नहीं कर सकेगी अतः भय और चिन्ता किस बात की ?

मुक्ति के लिए कमर कसकर करो तैयारी... समय बीता जा रहा है...

तृष्णा, ममता और वासना के ही बंधन होते हैं तथा इन्हीं बन्धनों में जकड़ा हुआ यह जीव जन्म-मरण के चक्र में घूमता रहता है। इनसे छूट जाना ही मुक्ति है। इसीका अभ्यास करने के लिए प्राचीन काल में योगियों की खोज की जाती थी। ऐसे महा योगियों की प्राप्ति होने पर भारत के बुद्धिमान राजा राजपाट का त्याग करके उनकी शरण ग्रहण करके जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो जाते थे। बन्धनों से छूट जाते थे। धन्य हैं ऐसे लोग जिन्हें नश्वर की अपेक्षा शाश्वत में रुचि होती है।

हजार-हजार विघ्न-बाधाएँ आने के बावजूद भी वीर पुरुष चलते हैं। वे निन्दा-स्तुति की परवाह नहीं करते। पकड़ लेते हैं ऐसों को जो पहुँचे हुए योगी हैं, जो दिखते सामान्य-से हैं पर जिनकी नजरों में नूर है, जो बन्धनों से मुक्त हैं, जो सरल, शान्त व जन्मजात योगी हैं तथा जो गुरु के सान्निध्य में वर्षों से सेवा-साधना कर चुके हैं ऐसों को संप्राप्त कर उनकी कसौटियों में से उत्तीर्ण होते हैं वे भी मुक्ति को प्राप्त करते हैं, परम आनन्दवान होकर विचरते हैं। आप भी खोज लो, पा लो ऐसों को व अपने जीवन को जीवनदाता से मिलाने के लिए कमर कसो। ॐ... ॐ... ॐ...

प्राणायामैकनिष्ठस्य न किंचिदपि दुर्लभम्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन प्राणायामा समभ्यसेत्॥

'जो पुरुष प्राणायाम में अनन्य आस्था रखता है उसके लिए कुछ भी प्राप्त कर लेना दुर्लभ नहीं है। अतः यत्नपूर्वक अभ्यास से प्राणायाम सिद्ध करना चाहिए।'

जैसे सूर्य के व्यवहार की गति शान्त होने पर जगत का व्यवहार शांत हो जाता है वैसे ही शास्त्रों व सज्जनों के संग से वैराग्य के अभ्यास का योग होने से संसार शांत हो जाता है।

जो निरंतर उस परमात्मा नारायण का ध्यान करता है, वह सर्व पापों से छूटकर मुक्त हो जाता है।

(पूज्य श्री नारायण स्वामी की पोथी से)

मन को संयम में रखने की रीति

❀ मन के साथ कभी मुठभेड़ मत करो। एकाग्रता के लिए जल्द प्रयासों का उपयोग मत करो। सब स्नायु और नस-नाड़ियों को शिथिल करो। मस्तिष्क को ढीला छोड़ दो। धीरे-धीरे अपने इष्टदेव का चिन्तन करो। भाव एवं अर्थ के साथ अपने गुरुमंत्र का उच्चारण करो। खदबदाते हुए मन को स्वस्थ करो। विचारों को शान्त करो।

❀ यदि मन में 'अहं' के सब संकल्प हों तो गुरु से दीक्षा लेने के बाद आत्मा का ध्यान करके एवं वेद का सच्चा रहस्य जानकर मन को विभिन्न दुःखों से वापस खींच सकते हैं और सुखदायक आत्मा में पुनः स्थापित कर सकते हैं।

❀ आध्यात्मिक गुरु का सत्संग और अच्छा माहौल मन की उन्नति में प्रचण्ड प्रभाव डालता है। यदि अच्छा सत्संग न मिल सके तो जिन्होंने आत्म-साक्षात्कार किया हो ऐसे महापुरुषों के ग्रंथों का सत्संग करना चाहिए। उदाहरणार्थ : श्री शंकराचार्य के ग्रंथ, योगवाशिष्ठ, श्री दत्तात्रेय की अवधूत गीता इत्यादि।

❀ आपके लिए किस प्रकार का योगमार्ग योग्य है यह आपको ही खोज लेना होगा। आप अगर यह नहीं कर सको तो जिन्होंने आत्म-साक्षात्कार किया हो ऐसे गुरु या आचार्य की सलाह आपको लेनी होगी। वे आपके मन की प्रकृति जानकर आपको उचित योग की पद्धति बतायेंगे।

❀ चंचल मन एक साधना से दूसरी साधना की ओर, एक गुरु से दूसरे गुरु की ओर, भक्तियोग से वेदान्त की ओर एवं हृषिकेश से वृन्दावन की ओर कूदता है। साधना के लिए यह अत्यन्त हानिकर्त्ता है। एक ही गुरु से, एक ही स्थान से लगे रहो।

– स्वामी श्री शिवानन्दजी

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

विजय के लिए संयम जरूरी

एक समय की बात है। एक बार दिल्ली के राजा नादिरशाह ने दूसरे देश पर चढ़ाई करने के पूर्व अपने सभी सैनिकों एवं सूबेदारों के लिए भोज-कार्यक्रम का आयोजन किया।

राजा के रसोइया ने बढ़िया रायता, चटनी, पुलाव आदि स्वादिष्ट व्यंजन बनाये। नादिरशाह स्वयं भोजन का निरीक्षण करने आया और देखा कि एकदम बढ़िया, स्वादिष्ट भोजन बना है... चटपटी मसालेदार सब्जियाँ बनी हैं... उसने बिना कुछ कहे मजदूरों को बुलवाकर उस भोजन में पानी डलवा दिया। सारा भोजन खराब हो गया। फिर वह रसोइयों से बोला :

''मेरे सिपाहियों को, सूबेदारों को ऐसा चटपटा, राजसी भोजन खिलाकर स्वाद का गुलाम बनाना चाहते हो ? मुझे विजय प्राप्त करने के लिए युद्ध करना है। मैं दूसरे देश पर फतह पाना चाहता हूँ। यदि मेरे सैनिक ऐसा राजसी भोजन ग्रहण करेंगे तो विजय प्राप्त करने के पहले ही धराशायी हो जायेंगे। मेरे सैनिकों को सादा, सात्त्विक एवं पौष्टिक भोजन देकर उनकी दृढ़ता बढ़ाओ। उनकी विजय प्राप्त करने की शक्ति को बढ़ाओ, न कि उन्हें स्वाद का गुलाम बनाओ।''

किसी दूसरे देश पर फतह पाने के छोटे से लक्ष्य के लिए नादिरशाह जैसा राजा भी इच्छाओं की कुर्बानी करता है तो हे मेरे साधक ! तुम्हारा लक्ष्य तो विश्वनियंता को प्राप्त करना है। यदि तुम भी छोटी-छोटी इच्छा-वासनाओं की कुर्बानी दे दो तो वह विश्वनियंता तो तुम्हारा अपना आपा ही है। फिर उसे पाना तुम्हारे लिए सहज हो जायेगा... सहज तो क्या ? तुम स्वयं उसके आनंद से सराबोर होकर उसमय हो जाओगे...

❀

सबसे कठोर दण्ड

किसी भी भोग-पदार्थ की वासना को पोसने से वह वासना तृप्त नहीं होती है वरन् और अधिक भड़क उठती है। जैसे जलती हुई आग में ईंधन डालने पर ज्वाला तेज हो जाती है ठीक उसी प्रकार वासना को पोसने से वह और ज्यादा भड़कने लगती है। एक बार भी यदि व्यक्ति विवेक खोकर, विषयों में अंधा होकर गिरता है तो फिर गिरता ही जाता है।

अरब देश का एक वजीर विषय-विलास में गर्क होकर गैरकानूनी कार्य करने लगा। हालाँकि उसने एक बार शादी कर ली थी, फिर भी अपनी शादी की बात को छुपाकर दूसरी लड़की से शादी कर ली। कुछ ही समय बाद वासना में अंधे बने उस वजीर ने 'मैं शादीशुदा नहीं हूँ' - ऐसा कहकर तीसरी युवती को भी अपनी पत्नी बना लिया और ऐसे ही उसने चौथी शादी भी कर ली। वजीर ने उन चारों पत्नियों को अलग-अलग स्थानों पर रखा ताकि किसीको इस बात का पता न लग सके !

अत्यधिक विषय-भोग तन को तो कमजोर करता ही है, साथ ही मन को भी खिन्न कर देता है तथा विवेक का भी नाश कर देता है।

लेकिन सच्चाई भला कब तक छिप सकती थी ? एक दिन सच्चाई सबके सामने आ ही गयी। चारों पत्नियाँ राजा के पास न्याय लेने गयीं। राजदरबार में वजीर को भी बुलाया गया। राजा ने अपने न्यायाधीश से कहा :

''इस झूठे, पापी वजीर को कड़ी-से-कड़ी सजा दी जाए। इसने वजीर पद का घोर अपमान किया है। वजीर होकर भी, चार-चार औरतों से झूठ बोलकर

शादी कर ली है। अतः इसे कानून के अनुसार कठोर दंड दिया जाये।''

न्यायाधीश ने राजा से एक दिन की मोहलत माँगी। दूसरे दिन उस न्यायाधीश ने खूब सोच-विचार कर कहा : ''अपने दुष्कृत्य के बदले में इसे ऐसी सख्त सजा दी जाती है कि जिसे देखकर कोई भी ऐसा दुराचरण करने से पहले अवश्य विचार करेगा। न्यायालय का हुक्म है कि इसे पूरी जिंदगी चारों पत्नियों के साथ बितानी पड़ेगी।''

यह निर्णय सुनकर राजा ने बड़ी हैरानी से पूछा : ''न्यायाधीश ! यह कठोर दंड है या उसकी मनभावन बात ? इसे तो फाँसी की सजा दी जानी चाहिए थी।''

न्यायाधीश : ''राजन् ! मैंने वजीर को फाँसी की सजा से भी बड़ी सजा फरमाई है।''

राजा : ''वह कैसे ?''

न्यायाधीश : ''राजन् ! यदि इसे फाँसी की सजा दी जाए तो यह केवल कुछ मिनटों में ही मर जायेगा, जबकि चार-चार पत्नियों के साथ रहेगा तो हर रोज फाँसी के कष्ट से भी ज्यादा कष्ट भुगतेगा।''

बात बिलकुल है भी सच। विषय-भोग को भोगते-भोगते मनुष्य की मृत्यु से भी बदतर हालत हो जाती है। अतः विषय-भोगों से सदैव सतर्क रहना चाहिए। अत्यधिक विषय-भोग तन को तो कमजोर करता ही है, साथ ही मन को भी खिन्न कर देता है तथा विवेक का भी नाश कर देता है।

विषय-भोग तो दुःखदायी हैं ही किन्तु विषयी मनुष्यों का संग तो उससे भी ज्यादा दुःखदायी है। जो भी कर्म करें उसमें सावधानी रखें। नहीं तो इस न्यायाधीश ने तो वजीर को चार पत्नियों के साथ रहने का आदेश देकर केवल जीवनभर की परेशानी की सजा सुना दी जबकि न्यायाधीशों के न्यायाधीश परमात्मा का जो परमेश्वरीय विधान है वह तो हमें ८४ लाख योनियों में गर्भवास का महा कष्ट देकर कड़ी-से-कड़ी सजा फरमा सकता है। अतः सावधान ! विषय-विकारों से बचकर निर्विकारी नारायण को पाने में लग जाओ...संयम, सादगी और सज्जनता का व्यवहार यही उत्कर्ष की कड़ी है। ❀

महिमा 'ऋषि प्रसाद' की

महिमा 'ऋषि प्रसाद' की, नहीं बखानी जाय।
बड़भागी वो साधक जन, जिनके घर में जाय ॥
आप पढ़े औरों को दे, बढ़े जीवन का पुण्य।
सद्गुरु कृपा को पाओगे, जीवन होगा धन्य ॥
पाप मिटे संताप मिटे, मिले सत्य का ज्ञान।
पुण्य प्रसाद है बापू का, पा के हो जा महान् ॥
अपने अहं को छोड़ दे मिथ्या बंधन को तोड़ दे॥
नश्वर जीवन है कुछ पल का परब्रह्म से रिश्ता जोड़ दे ॥
सद्गुरु स्वयं तेरे साथ हैं कौन कहे तू अनाथ है॥
सद्गुरु चरण में शीश नवा जीवन्मुक्ति तेरे हाथ है ॥

- उमराव सरस्वती
कल्याण (पूर्व), मुंबई।

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

परीक्षा में सफलता कैसे पायें ?

किसीने कहा है :

अगर तुम ठान लो,
तारे गगन के तोड़ सकते हो।
अगर तुम ठान लो,
तूफान का मुख मोड़ सकते हो ॥

यह कहने का तात्पर्य यही है कि जीवन में ऐसा कोई कार्य नहीं जिसे मानव न कर सके। जीवन में ऐसी कोई समस्या नहीं जिसका समाधान न हो।

जीवन में संयम, सदाचार, प्रेम, सहिष्णुता, निर्भयता, पवित्रता, दृढ़ आत्मविश्वास और उत्तम संग हो तो विद्यार्थी के लिए अपना लक्ष्य प्राप्त करना आसान हो जाता है।

यदि विद्यार्थी बौद्धिक-विकास के कुछ प्रयोगों को समझ लें, जैसे कि सूर्य को अर्घ्य देना, भ्रामरी प्राणायाम करना, तुलसी के पत्तों का सेवन, त्राटक करना, सारस्वत्य मंत्र का जाप करना आदि-तो परीक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होना विद्यार्थियों लिए आसान हो जायेगा।

विद्यार्थी जीवन ही भावी जीवन की आधारशिला है। विद्यार्थीकाल में वह जितना संयमी, सदाचारी, निर्भय एवं सहिष्णु होगा, बुरे संग एवं व्यसनों को त्यागकर सत्संग का आश्रय लेगा, प्राणायाम-आसनादि को सुचारु रूप से करेगा उतना ही उसका जीवन समुन्नत होगा।

विद्यार्थी को चाहिए कि रोज सुबह सूर्योदय से पहले उठकर सबसे पहले अपने इष्ट का, गुरु का स्मरण करे। फिर स्नानादि करके अपने पूजाकक्ष में बैठकर गुरुमंत्र, इष्टमंत्र अथवा सारस्वत्य मंत्र का जाप करे। अपने गुरु या इष्ट की मूर्ति की ओर एकटक निहारते हुए त्राटक करे। अपने श्वासोच्छ्वास की गति पर ध्यान देते हुए मन को एकाग्र करे। भ्रामरी प्राणायाम करे जो 'विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर' में सिखाया जाता है।

प्रतिदिन सूर्य को अर्घ्य दे एवं तुलसी के ५-७ पत्तों को चबाकर २-४ घूँट पानी पिये।

रात को देर तक न पढ़े वरन् सुबह जल्दी उठकर उपरोक्त नियमों को करके अध्ययन करे तो इससे पढ़ा हुआ शीघ्र याद हो जाता है।

जब परीक्षा देने जाये तो तनाव-चिंता से युक्त होकर नहीं वरन् इष्ट-गुरु का स्मरण करके, प्रसन्न होकर जाये।

परीक्षा भवन में भी जब तक प्रश्नपत्र हाथ में नहीं आता तब तक शांत एवं स्वस्थ चित्त होकर प्रसन्नता को बनाए रखे।

प्रश्नपत्र हाथ में आने पर उसे एक बार पूरा पढ़ लेना चाहिए एवं जो प्रश्न आता है उसे पहले करे। ऐसा नहीं कि जो नहीं आता उसे देखकर घबरा जाये। घबराने से तो जो प्रश्न आता है वह भी भूल जाएगा।

जो प्रश्न आते हैं उन्हें हल करने के बाद जो नहीं आते उनकी ओर ध्यान दे। अंदर दृढ़ विश्वास रखे कि मुझे ये भी आ जायेंगे। अंदर से निर्भय रहे एवं भगवत्स्मरण करके एकाध मिनट शान्त हो जाये, फिर लिखना शुरू करे। धीरे-धीरे उन प्रश्नों के उत्तर भी मिल जायेंगे।

मुख्य बात यह है कि किसी भी कीमत पर धैर्य न खोये। निर्भयता एवं दृढ़ आत्मविश्वास बनाये रखे।

विद्यार्थियों को अपने जीवन को सदैव बुरे संग से बचाना चाहिए। न तो वह स्वयं धूम्रपानादि करे न

ही ऐसे मित्रों का संग करे । व्यसनों से मनुष्य की स्मरणशक्ति पर बड़ा खराब प्रभाव पड़ता है।

व्यसन की तरह चलचित्र भी विद्यार्थी की जीवन-शक्ति को क्षीण कर देते हैं। आँखों की रोशनी को कम करने के साथ ही मन एवं दिमाग को भी कुप्रभावित करनेवाले चलचित्रों से विद्यार्थियों को सदैव सावधान रहना चाहिए। आँखों के द्वारा बुरे दृश्य अंदर घुस जाते हैं एवं वे मन को भी कुपथ पर ले जाते हैं। इसकी अपेक्षा तो सत्संग में जाना, सत्शास्त्रों का अध्ययन करना अनंतगुना हितकारी है।

यदि विद्यार्थी ने अपना विद्यार्थी जीवन सँभाल लिया तो उसका भावी जीवन भी सँभल जाता है क्योंकि विद्यार्थी जीवन ही भावी जीवन की आधारशिला है। विद्यार्थीकाल में वह जितना संयमी, सदाचारी, निर्भय एवं सहिष्णु होगा, बुरे संग एवं व्यसनों को त्यागकर सत्संग का आश्रय लेगा, प्राणायाम-आसनादि को सुचारु रूप से करेगा उतना ही उसका जीवन समुन्नत होगा। यदि नींव सुदृढ़ होती है तो उस पर बना विशाल भवन भी दृढ़ एवं स्थायी होता है। विद्यार्थीकाल मानव-जीवन की नींव के समान है अतः उसको सुदृढ़ बनाना चाहिए।

रात को देर तक न पढ़े वरन् सुबह जल्दी उठकर उपरोक्त नियमों को करके अध्ययन करे तो इससे पढ़ा हुआ शीघ्र याद हो जाता है।

इन बातों को समझकर उन पर अमल किया जाय तो केवल लौकिक शिक्षा में ही सफलता प्राप्त होगी ऐसी बात नहीं है वरन् जीवन की हर परीक्षा में विद्यार्थी सफल हो सकता है।

हे विद्यार्थी ! उठो... जागो... कमर कसो। दृढ़ता एवं निर्भयता से जुट पड़ो। बुरे संग एवं व्यसनों को त्यागकर, संतों-सद्गुरुओं के मार्गदर्शन के अनुसार चल पड़ो... सफलता तुम्हारे चरण चूमेगी।

धन्य हैं वे लोग जिनमें ये छः गुण हैं! अंतर्यामी देव सदैव उनकी सहायता करते हैं :

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धि शक्तिः पराक्रमः ।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत् ॥

'उद्योग, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम- ये छः गुण जिस व्यक्ति के जीवन में हैं, देव उसकी सहायता करते हैं।'

व्यसनों से स्मरणशक्ति पर बड़ा खराब प्रभाव पड़ता है। चलचित्र भी विद्यार्थी की जीवन-शक्ति को क्षीण कर देते हैं। आँखों की रोशनी को कम करने के साथ ही मन एवं दिमाग को भी कुप्रभावित करनेवाले चलचित्रों से विद्यार्थियों को सदैव सावधान रहना चाहिए।

सद्विचाररूपी बेटा

टिहरी के राजा महेन्द्रप्रताप निःसंतान थे। एक बार उन्होंने पुत्र-जन्मोत्सव के निमित्त पंडित मदनमोहन मालवीय एवं अन्य मित्रों को न्यौता दिया।

मालवीयजी समेत सभी लोग आ गये। सभीको भोजन वगैरह करवाया गया। तत्पश्चात् मालवीयजी बोले :

''भाई ! बेटे का नाम मुझसे रखवाना चाहते हो न, तो बेटे को ले आओ।''

राजा महेन्द्रप्रताप गये महल में एवं रानी को ले आये। मालवीयजी ने रानी से पूछा :

''बेटा कहाँ है ?''

तब महेन्द्रप्रताप ने कहा :

''बेटा रानी को नहीं, मुझे हुआ है।''

यह सुनकर सभी चकित हो गये कि राजा क्या बोल रहे हैं ! मालवीयजी ने पुनः कहा :

''लाओ, आपको जो बेटा हुआ है उसका नाम रख दूँ।''

तब राजा महेन्द्रप्रताप ने कहा :

''मेरे सौ गाँव हैं। उनमें से मैं ९९ गाँव विद्यार्थियों को तेजस्वी-ओजस्वी बना सके ऐसी संस्था के लिए अर्पित करता हूँ ताकि विद्यार्थी केवल पेटपालू

(शेष पृष्ठ ३० पर)
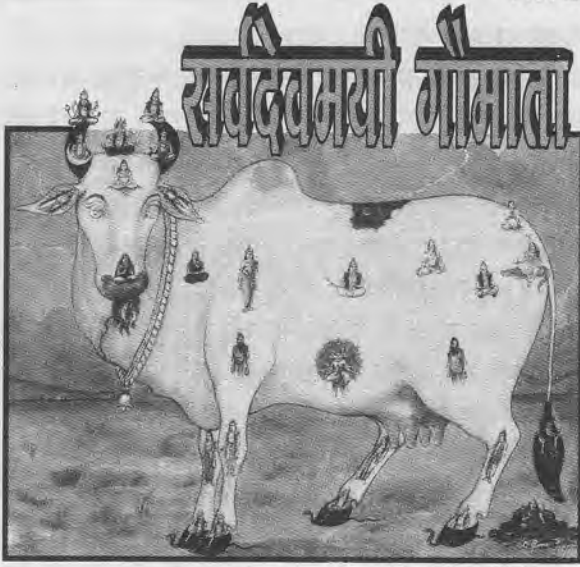
गौमाता : प्रदूषण मुक्ति प्रदायिनी

[गतांक का शेष]

पर्यावरण प्रदूषण निवारण में गाय से प्राप्त कुछ उत्पादों का योगदान निम्न प्रकार है :

(१) दुर्गंध से बचाव : गाय का गोबर हमारे देश में परम पवित्र माना जाता है। यह अत्यधिक उपयोगी पदार्थ है। सर्वसुलभ तथा सस्ता होने के कारण हम इसके महत्त्व को नहीं समझ पाये हैं। गाय का गोबर मानव जाति का सबसे बड़ा पोषक, दुर्गंधनाशक, कीटनाशक, पृथ्वीशोधक तथा रोगनिवारक है। सभी पशुओं की विष्ठा में से दुर्गंध आती है परंतु गाय के गोबर से नहीं आती। इसीलिए गंदे स्थानों को भी इससे लीपकर शुद्ध तथा प्रदूषणरहित बनाया जाता है। पूजन के समय, खाना बनाने से पूर्व, अन्य सभी शुभ कार्यों तथा रोगी व शव को उठाने के पश्चात् उस स्थान को शुद्ध एवं जन्तुरहित करने हेतु गाय के गोबर का प्रयोग किया जाता है। गोबर के कंडे की राख का प्रयोग दुर्गंधपूर्ण जगहों, शौचालयों आदि को दुर्गंधरहित बनाने के लिए किया जाता है। इतना सुलभ, सस्ता और गंधहारी पदार्थ अन्य कोई नहीं है। अतः पर्यावरण में व्याप्त दुर्गंध को अवशोषित करके गंधहीन तथा साँस लेने लायक बनाने में गाय का अपूर्व योगदान है।

(२) विकिरण से बचाव : वैज्ञानिक तौर पर यह सिद्ध हो चुका है कि गोबर से घरों पर विकिरण का प्रभाव कम पड़ता है। इसके अतिरिक्त सूती कपड़े को गाय के गोबर के घोल में डुबोकर तथा साफ करके ओढ़ने या पहनने से विकिरण का प्रभाव बहुत ही कम पड़ता है। इस तथ्य से सिद्ध होता है कि गाय विकिरणरूपी प्रदूषण से भी मानव जाति की रक्षा करती है।

(३) पृथ्वीशोधक : यह तो सर्वविदित सत्य है कि जहाँ रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी तथा खरपतवारनाशी दवाएँ भूमि को प्रदूषित करती हैं वहीं कम्पोस्ट तथा गोबर की खाद भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के साथ-साथ उसे प्रदूषण से भी मुक्त करती है। गोबर यदि गाय का हो तो सबसे अधिक गुणकारी होता है। गोबर की खाद में पानी को सोखने की क्षमता अधिक होती है जिससे भूमि में नमी काफी दिनों तक बनी रहती है। इससे भूमि की गुणवत्ता में भी सुधार होता है। गोबर की खाद से पोषित भूमि में उगाये गये अन्न तथा सब्जियाँ पूर्ण रूप से स्वस्थ तथा विषरहित होती हैं। आजकल सब्जियों की पैदावार बढ़ाने तथा कीड़े-मकोड़ों से बचाने के लिए विभिन्न प्रकार की कीटनाशी दवाओं का छिड़काव किया जाता है जिससे सब्जियों की पैदावार तो बढ़ जाती है परंतु उनमें विषाक्तता इतनी बढ़ जाती है कि वे मनुष्य के लिए घातक सिद्ध होती हैं। अतः रासायनिक खादों की जगह हम गोबर की खाद का प्रयोग करें तथा अपनी पृथ्वी को प्रदूषण से मुक्त रखें।

(४) हानिकारक कीटों तथा जीवाणुओं से बचाव : गोबर के कंडे की राख तथा गोमूत्र का छिड़काव सबसे अच्छे, सस्ते, सुलभ तथा सुरक्षित कीटनाशी हैं। राख का प्रयोग गाँवों में आज भी मैथी, पालक, धनिया, लौकी, तुरई, कद्दू, टमाटर, बैंगन आदि सब्जियों में किया जाता है। गोबर के कंडे की राख से दीमक का प्रकोप कम होता है। गाय के गोबर से लीपे स्थान पर मक्खियाँ कम आती हैं। गाय के सूखे गोबर को जलाने से उससे निकलनेवाली गैस से कई किस्म के जीवाणु तत्काल नष्ट हो जाते हैं। अमेरिका के डॉ. मैकफर्सन के अनुसार गाय के गोबर से बढ़कर

कीटाणुनाशी कोई दूसरा पदार्थ नहीं है। गाय के गोबर की गंध मात्र से ही टी. बी. जैसी भयंकर बीमारी के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। इसी तरह गोमूत्र में कीटनाशी गुण पाये जाते हैं । यदि इनका प्रयोग किया जाये तो साग-सब्जियों तथा फलों की विषाक्तता को काफी कम किया जा सकता है। इस प्रकार गाय खाद्य पदार्थों को विषमुक्त करके मानव जाति की सेवा करती है।

(५) सबसे सस्ता तथा सुलभ ईंधन : ईंधन के रूप में गाय के गोबर से सस्ता तथा सुलभ कोई भी पदार्थ नहीं है। इससे निकलनेवाला धुआँ सबसे कम प्रदूषण फैलाता है तथा मक्खी, मच्छर, घुन जैसे हानिकारक कीड़े-मकोड़ों को दूर भगाता है । इससे निकलनेवाले धुएँ में कार्बनडाईऑक्साइड गैस रहती है जो मानव के लिए कम हानिकारक तथा वनस्पतियों के लिए पोषक का काम करती है। कार्बनडाईऑक्साइड के बदले पेड़-पौधे हमें प्राणवायु प्रदान करते हैं जबकि कोयले से कार्बन मोनोक्साइड, डीजल, पेट्रोलियम तथा मिट्टी के तेल से सल्फर डायाक्साइड तथा नाइट्रोजन डायाक्साइड जैसी हानिकारक गैसें निकलती हैं जो मनुष्य तथा वनस्पति दोनों के लिए हानिकारक हैं।

दूसरी तरफ यह भी विचारणीय प्रश्न है कि भारत की लगभग ६० करोड़ जनता आज भी ईंधन के रूप में गोबर का प्रयोग करती है। इससे एक तरफ तो हमें बहुत सस्ता ईंधन मिल जाता है तथा दूसरी तरफ लकड़ी, कोयला तथा पेट्रोलियम पदार्थों की अच्छी-खासी बचत हो जाती है। अतः गोबर देकर गाय हमारा कितना उपकार कर रही है तथा किस प्रकार प्रदूषण से बचा रही है इसका अंदाज शायद अभी हमें नहीं है।

(६) सबसे अच्छा सारक : दुनिया का कोई भी ज्वलनशील पदार्थ ऐसा नहीं है जिससे बहुत हलकी, देर तक टिकनेवाली तथा समान उष्मावाली आग मिलती रहे। मात्र गोबर के कंडे की आग ही ऐसी होती है। इसलिए किसी जड़ी-बूटी का सत्त्व निकालने के लिए कंडे की आग सबसे उपयुक्त मानी जाती है। विभिन्न किस्म के आसव, भस्म तथा सत्त्व बनाने के लिए कंडे का प्रयोग किया जाता है। इससे किसी सत्त्व का अर्क तो निकलता ही है, साथ ही उसकी गुणवत्ता में भी सुधार आता है। गैस, बिजली, कोयला आदि की आग से अर्क भले ही अधिक मिले परंतु उसकी गुणवत्ता का ह्रास होता है। गाय के गोबर के कंडे की आग से. विशिष्ट प्रकार के प्रभावोत्पादक किरणें निकलती हैं जिससे इसका प्रयोग औषधि एवं रस बनाने में सबसे उत्तम माना जाता है।

(७) जलशोधन : पानी को प्रदूषणरहित बनाने में भी गाय का कम योगदान नहीं है। पहाड़ी क्षेत्रों में आज भी प्रथा है कि जलस्रोत के बहते पानी को रोकने के लिए मिट्टी की मेड़ बनाकर उसके ऊपर गाय के गोबर का लेप करते हैं। उससे जो पानी एकत्र होता है उसे पीने के लिए प्रयोग करते हैं। गाय के गोबर में हैजा के जीवाणुओं को नष्ट करने की अदम्य क्षमता है। पानी के जिस स्रोत में हैजा के जीवाणु हों उनमें थोड़ा-सा गाय का गोबर सबसे अच्छा जीवाणुनाशक सिद्ध होता है। प्रदूषित पानी में मछलियाँ मरने लगती हैं परंतु गोबर डालने से मछलियाँ पोषित होती हैं तथा जलप्रदूषण समाप्त होता है। इस प्रकार गाय जलप्रदूषण को कम करती है।

(८) वायुशोधन : वायुप्रदूषण को कम कराने में गाय का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वैसे तो यह कहा जाता है कि जहाँ गाय रहती है वहाँ का वातावरण शुद्ध रहता है तथा उस जगह किसी प्रकार की आधि-व्याधि नहीं व्यापती है । इसे हम अभी तक कोरी कल्पना ही समझते रहे हैं। आज हम प्रत्यक्ष देख भी रहे हैं परंतु फिर भी मानने को तैयार नहीं हैं। वातावरण को शुद्ध करने में हवन का महत्त्व तो अब समझ में आने लगा है। **गाय के मात्र १० ग्राम घी से हवन करने पर ७० क्विन्टल वायु का शुद्धिकरण होता है । हवन से निकलनेवाला धुआँ प्रदूषण नहीं बल्कि जीवाणुनाशी तथा वायुशोधक है।** गाय के गोबर के कंडे की आग पर गाय का घी डालने से वायु का जितना शोधन होता है उतना अगरबत्ती तथा धूपबत्ती से नहीं होता। रोगी के कमरे में कंडे की आग पर गाय का घी डालकर शुद्धिकरण करना बहुत लाभदायक माना जाता है। इस प्रकार गौमाता वायु का प्रदूषण कम करके हमें शुद्ध वातावरण प्रदान करती हैं।

(क्रमशः)

वसंतऋतुचर्या

जन्मभूमि पंचांग के अनुसार १९ फरवरी से १९ अप्रैल तक का समय वसंत ऋतु माना जाता है जबकि एक अन्य पंचांगकर्त्ता के अनुसार १३ मार्च से १२ मई तक का, मीन एवं मेष राशि के सूर्य का समय वसंत ऋतु कहा जा सकता है।

वसंत ऋतु की महिमा के विषय में कवियों ने खूब लिखा है। गुजराती कवि दलपतराम ने कहा है :

रूड़ो जुओ आ ऋतुराज आव्यो।
मुकाम तेणे वनमां जमाव्यो॥

अर्थात्

देखो, सुंदर यह ऋतुराज आया।
आवास उसने वन को बनाया॥

वसंत का असली आनंद जब वन में से गुजरते हैं तब उठाया जा सकता है। रंगबिरंगे पुष्पों से आच्छादित वृक्ष... मंद-मंद एवं शीतल बहती वायु... प्रकृति मानो, पूरे बहार में होती है। ऐसे में सहज ही में प्रभु का स्मरण हो जाता है, सहज ही में ध्यानावस्था में पहुँचा जा सकता है।

ऐसी सुंदर ऋतु में आयुर्वेद ने खान-पान में संयम की बात कहकर व्यक्ति एवं समाज की नीरोगता का ध्यान रखा है। शीतऋतु में मेथीपाक, सूखे मेवे से बने पदार्थ, मधुर रसवाले तथा बल-पुष्टिकारक पदार्थ खाने के कारण शरीर में स्वाभाविक ही कफ का संचय हो जाता है। यह संचित कफ वसंत ऋतु में सूर्य किरणों के सीधे ही पड़ने के कारण पिघलने लगता है। इसके फलस्वरूप कफजन्य रोग जैसे कि सर्दी-खाँसी, बुखार, खसरा, चेचक, दस्त-उलटी, गले में खराश, टान्सिल्स का बढ़ना, सिर भारी-भारी लगना, सुस्ती, आलस्य वगैरह होने लगता है।

जिस प्रकार पानी अग्नि को बुझा देता है वैसे ही पिघला हुआ कफ जठराग्नि को मंद कर देता है। इसीलिए इस ऋतु में लाई, भूने हुए चने, ताजी हल्दी, ताजी मूली, अदरक, पुरानी जौ, पुराने गेहूँ की चीजें खाने के लिए कहा गया है। इसके अलावा मूँग बनाकर खाना भी उत्तम है।

देखो, आयुर्वेद विज्ञान की दृष्टि कितनी सूक्ष्म है! मन को प्रसन्न करे एवं हृदय के लिए हितकारी हो ऐसे आसव, अरिष्ट जैसे कि मध्वारिष्ट, द्राक्षारिष्ट, गन्ने का रस, सिरका वगैरह पीना इस ऋतु में लाभदायक है।

नागरमोथ अथवा सौंठ का उबाला हुआ पानी पीने से कफ का नाश होता है।

वसंत ऋतु में आनेवाला होली का त्यौहार इस ओर संकेत करता है कि शरीर को थोड़ा सूखा सेंक देना चाहिए जिससे कफ पिघलकर बाहर निकल जाये। सुबह जल्दी उठकर थोड़ा व्यायाम करना, दौड़ना अथवा गुलाटियाँ खाने का अभ्यास लाभदायक होता है।

मालिश करके सूखे द्रव्य, आँवले, त्रिफला अथवा चने के आटे आदि का उबटन लगाकर गर्म पानी से स्नान करना हितकर है। आसन, प्राणायाम एवं टंकविद्या की मुद्रा विशेष रूप से करनी चाहिए।

दिन में सोना नहीं चाहिए। दिन में सोने से कफ कुपित होता है। जिन्हें रात्रि में जागना आवश्यक है वे थोड़ा सोयें तो ठीक है। इस ऋतु में रात्रि जागरण भी नहीं करना चाहिए।

वसंत ऋतु में सुबह खाली पेट हरड़े के चूर्ण को शहद के साथ सेवन करने से लाभ होता है। वसंत ऋतु में कड़वे नीम में नयी कोपलें फूटती हैं। नीम की १५-२० कोपलों को २-३ काली मिर्च के साथ खूब चबा-चबाकर खाना चाहिए। १५-२० दिन यह प्रयोग करने से आरोग्यता की रक्षा होती है। इसके

अलावा कड़वे नीम के फूलों का रस ७ से १५ दिन तक पीने से त्वचा के रोग एवं मलेरिया जैसे ज्वर से भी बचाव होता है।

मधुर रसवाले पौष्टिक पदार्थ एवं खट्टे-मीठे रसवाले फल वगैरह पदार्थ जो कि शीत ऋतु में खाये जाते हैं उन्हें खाना बंद कर देना चाहिए। वसंत ऋतु के कारण स्वाभाविक ही पाचन शक्ति कम हो जाती है अतः पचने में भारी पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। ठंडे पेय, आइसक्रीम, बर्फ के गोले, चॉकलेट, मैदे की चीजें, खमीरवाली चीजें, दही वगैरह पदार्थ बिल्कुल त्याग देना चाहिए।

धार्मिक ग्रंथों के वर्णनानुसार 'अलौने व्रत' (बिना नमक के व्रत) चैत्र मास के दौरान् करने से रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है एवं त्वचा के रोग, हृदय के रोग, हाई बी. पी., किडनी आदि के रोग नहीं होते हैं।

यदि कफ ज्यादा हो तो रोग होने से पूर्व 'वमन कर्म' द्वारा कफ को निकाल देना चाहिए किन्तु 'वमन कर्म' किसी योग्य वैद्य की निगरानी में करना ही हितावह है। सामान्य उलटी करनी हो तो आश्रम से प्रकाशित 'योगासन' पुस्तक में बतायी गयी विधि के अनुसार 'गजकरणी' की जा सकती है। इससे अनेक रोगों से बचाव हो सकता है।

सूखा मेवा

(गतांक का शेष)

चारोली

चारोली बदाम की प्रतिनिधि मानी जाती है। जहाँ बदाम न मिल सके वहाँ चारोली का प्रयोग किया जा सकता है।

चारोली स्वाद में मधुर, स्निग्ध, भारी, शीतल एवं हृद्य है। देह का रंग सुधारनेवाली, बलवर्धक, वायु दर्दनाशक एवं शिरःशूल को मिटानेवाली है।

सौंदर्यवृद्धि : चारोली को दूध में पीसकर मुँह पर लगाने से काले दाग दूर होकर त्वचा कांतिमान बनती है।

खूनी दस्त में : ५-१० ग्राम चारोली को पीसकर दूध के साथ लेने से रक्तातिसार (खूनी दस्त) मिटता है।

शीतपित्त में : चारोली को दूध में पीसकर शीतपित्त पर लगायें।

नपुंसकता में : गेहूँ के आटे के हलुए में ५-१० चारोली डालकर खाने से नपुंसकता दूर होती है।

चारोली का तेल : बालों को काला करने के लिए उपयोगी है।

(पृष्ठ २६ का शेष)

सर्टिफिकेट के भगत न बनें परंतु अपने इहलोक-परलोक की विद्या को पाकर महान् आत्मा बनें। केवल एक गाँव मैं अपने गुजारे के लिए रखता हूँ। मुझे यही सद्विचाररूपी बेटा पैदा हुआ है।''

उपस्थित सुननेवालों का हृदय पिघल गया और मदनमोहन मालवीयजी की आँखों में भी पानी आ गया। वे बोले :

''महेन्द्रप्रताप ! एक-दो या चार-पाँच बच्चों के लिए कई स्वार्थी लोग जी-जीकर खत्म हो जाते हैं। भारत के सपूतों के कल्याण के लिए आपको जो बेटा पैदा हुआ है, जो शुभविचाररूपी पुत्र उत्पन्न हुआ है उसका नाम भी दिव्य होना चाहिए। उस बेटे का मैं नाम रखता हूँ - प्रेम महाविद्यालय।''

इसी 'प्रेम महाविद्यालय' में शिक्षा पाकर स्वामी संपूर्णानंद एवं जुगल किशोर बिरला जैसों का प्रागट्य हुआ।

पेटपालू विद्यार्थी बनना कोई बड़ी बात नहीं है लेकिन हृदय को शुद्ध करके, उत्तम संस्कार पाकर, अपना एवं अपनी भावी पीढ़ियों का कल्याण कर सको ऐसा तेजस्वी-ओजस्वी विद्यार्थी बनना ही तुम्हारा उद्देश्य होना चाहिए।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ६५ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मार्च तक अपना नया पता भिजवा दें।

उड़ीसा : दिनांक : २७-१-९८ को प्रथम बार उड़ीसा राज्य के **कटक** में पूज्यश्री का पदार्पण होने पर हजारों उड़ीसावासियों ने उनका भावभीना स्वागत किया। तीन दिवसीय सत्संग समारोह के प्रथम सत्र के पश्चात् ही लोगों को यह कहते हुए सुना गया कि 'पिछले कई वर्षों से यहाँ साधु-संतों का आगमन हो रहा है किन्तु जो ज्ञान पूज्य बापू के सत्संग से मिला ऐसा ज्ञान आज के यांत्रिक युग में अन्यत्र मिलना मुश्किल है क्योंकि पू. बापू ज्ञान के साथ-साथ जीवन जीने की कला एवं स्वस्थ जीवन जीने की युक्तियाँ भी बताते हैं।

लोकलाडीले संत पू. बापू ने भावी भारत के नागरिक एवं आज के युवा वर्ग को संयम-सदाचार की महत्ता बताते हुए कहा : **''कभी भी सिंह की बलि नहीं दी जाती है। बलि तो बकरे की ही चढ़ायी जाती है। अतः बलवान बनकर दुर्गुण-दुराचार के समक्ष निर्भयतापूर्वक टक्कर लेनी चाहिए।''**

कटकवासियों की उत्कट श्रद्धा देखकर सत्संग कार्यक्रम में एक दिन और बढ़ाया गया। कटकवासी धन्य-धन्य हो उठे यह देखकर। विदाई की वेला तो उस दृश्य की स्मृति दिला रही थी, जब श्रीकृष्ण वृंदावन से मथुरा जा रहे थे। सभी कटकवासी ग्वाल-गोपियों की तरह हाथ जोड़कर, अश्रुभरी आँखों से अपने प्यारे-दुलारे संत को निहार रहे थे, किन्तु कुछ बोल नहीं पा रहे थे।

तीरड़ा (उड़ीसा) : दिनांक : ३१-१-९८ को पूज्य बापू के पावन सान्निध्य में श्रद्धालुओं की ओर से बोगनियापाड़ा, तीरड़ा ग्राम में एक विशाल भण्डारे का आयोजन किया गया जिसमें निर्धनों को फल, मिठाई, अन्न-वस्त्र तथा आर्थिक सहायता प्रदान की गयी। विश्व-वंदनीय इन असाधारण विभूति पूज्य बापू को अपने बीच पाकर आदिवासियों की खुशी की सीमा न रही! यहाँ पर भक्तों ने अपनी मेहनत से तैयार किये गये मंदिर का उद्घाटन पूज्य बापू के पावन करकमलों द्वारा करवाया एवं पूज्यश्री से आध्यात्मिक उत्थान एवं तंदुरुस्ती की विभिन्न कुंजियाँ प्राप्त कीं।

ब्रह्मपुर : दिनांक : २९ से ३१ जनवरी '९८ तक श्री सुरेशानंदजी के सत्संग के पश्चात् दिनांक : १ एवं २ फरवरी '९८ को यहाँ की जनता को अलख के औलिया पूज्य बापू की सत्संग-सरिता में अवगाहन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ब्रह्मपुर में ऐसा आयोजन पहली बार ही हुआ था। हजारों की संख्या में विशाल जनसमूह उमड़ पड़ा था यहाँ!

कालाहांडी : ब्रह्मपुर के सत्संग की पूर्णाहुति के बाद दरिद्रनारायणों की सेवा के लिए अपनी ही ओर से कार्यक्रम बनाकर पूज्य बापू दिनांक : ३ फरवरी '९८ को कालाहांडी पहुँचे। वहाँ दस से बारह हजार आदिवासियों में अन्न-वस्त्र, मेवा-मिठाई, बर्तन एवं दक्षिणा का वितरण किया गया। साथ ही उन्हें पूज्यश्री की पावन स्नेहरूपी सरिता में स्नान करने का भी अवसर मिला। कलकत्ता, रायपुर एवं अमदावाद के सेवाधारी बड़े ही प्रेम एवं उत्साह से यहाँ भंडारे की सेवा कर रहे थे। इस भंडारे में दो राजनेताओं ने विघ्न डालने के सभी प्रयत्न कर डाले किन्तु गरीबों की श्रद्धा एवं भक्तों की सेवा से उनके सभी प्रयास निष्फल हुए। पता नहीं ये नेता ऐसा कार्य क्यों करते हैं?

हालाँकि कई अधिकारियों ने कहा भी कि 'हमें राजनैतिक दबाव दिया जा रहा है, माफ करो।' फिर भी आश्चर्य को भी आश्चर्य हो जाये ऐसा सुंदर सफल आयोजन हुआ कालाहांडी में।

रायपुर : दिनांक : ३ फरवरी की रात्रि को पूज्य बापू एकांतवास के लिए रायपुर स्थित आश्रम में पधारे किन्तु वहाँ भी पूज्यश्री को कौन रहने दे एकांत में? हजारों की भीड़ वहाँ भी एकत्रित हो गयी। लोगों की श्रद्धा-भक्ति के वशीभूत होकर पूज्यश्री ने यहाँ भी

सत्संग की गंगा बहायी।

दिनांक : ६ फरवरी '९८ को पूज्यश्री नागपुर, बैतूल होते हुए हरदा के लिए रवाना हुए। हरदा के समीप स्थित एक गाँव के लोग दोपहर दो बजे से ही पूज्यश्री के आगमन का अनुमान लगाये बैठे थे। बिना किसी पूर्व सूचना के भी दर्शन के लिए आतुर लोगों ने रात्रि के ११ बजे तक प्रतीक्षा की ! उनकी प्रतीक्षा सफल हुई एवं रात्रि को ११ बजे पूज्यश्री के दर्शन एवं सत्संग प्रसाद को पाकर उन्होंने धन्यता का अनुभव किया।

हरदा : यहाँ पर एक लाख व्यक्तियों की क्षमतावाला सत्संग-पंडाल श्री सुरेशानंदजी के सत्संग में ही छोटा पड़ गया तो पूज्यश्री के आगमन पर क्या कहना ! दिनांक : ७ एवं ८ फरवरी के पूज्यश्री के सत्संग कार्यक्रम में हरदा तो मानो, हरिद्वार के कुंभ की खबर दे रहा था।

लाखों श्रद्धालुओं को सत्संग-वर्षा में सराबोर करके दिनांक : ८ फरवरी की शाम को सत्संग की पूर्णाहुति करके पूज्यश्री भोपाल पधारे। मार्ग में टीमरनीवासियों को भी थोड़ी देर के लिए पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ प्राप्त हुआ।

भोपाल : दिनांक : ९ से १२ फरवरी तक भोपाल आश्रम में आयोजित ध्यान योग शिविर में लाखों लोगों ने पूज्यश्री के मुखारविंद द्वारा निःसृत पावन गंगा में स्नान करके धन्यता का अनुभव किया। यहाँ पूज्यश्री ने इस भीषण कलिकाल में लाखों लोगों को ईश्वरीय मार्ग में प्रवृत्त किया तथा उनमें आत्मशक्ति का संचार करते हुए जीवन जीने की कला सिखायी। शक्तिपात दीक्षा के समर्थ आचार्य पूज्य बापू ने यहाँ हजारों लोगों को ध्यान की गहराई में ईश्वरीय कृपा का अनुभव कराया।

दिनांक : ११ फरवरी को देश के विभिन्न भागों से आये हुए हजारों पूनमव्रतधारियों को पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ मिला। शिविर की पूर्णाहुति के पश्चात् पूज्यश्री ने कोटा के लिए प्रस्थान किया।

कोटा : यहाँ दिनांक : ११ एवं १२ फरवरी '९८ के श्री सुरेशानंदजी के प्रवचनों के उपरांत दिनांक : १३ से १५ फरवरी '९८ तक कोटा के दशहरा मैदान में आयोजित गीता-भागवत सत्संग समारोह में लाखों की संख्या में लोगों ने परम पूज्य सद्गुरुदेव की पीयूषवर्षी वाणी का लाभ लिया।

परम पूज्य सद्गुरुदेव के पावन करकमलों द्वारा दिनांक : १२ फरवरी को कोटा से १२ किलोमीटर दूर स्थित लखावा गाँव में नवनिर्मित संत श्री आसारामजी आश्रम का उद्घाटन हुआ। इस अवसर पर पूज्य बापू ने आश्रम के महत्त्व को समझाते हुए कहा :

''मनुष्य के कार्यों में वातावरण की अहम् भूमिका होती है। मनुष्य जिस माहौल में रहता है उसके विचार उसी प्रकार के हो जाते हैं। इसीलिए आश्रम में आने पर सभीको शांति मिलती है।''

अपने कार्यक्रम का प्रथम दिन पूज्यपाद सद्गुरुदेव ने बच्चों के नाम कर दिया। कोटा शहर के विभिन्न विद्यालयों से आये हुए हजारों छात्र-छात्राओं को पूज्य बापू ने जीवन को ओजस्वी-तेजस्वी बनाने एवं स्मरणशक्ति बढ़ाने की कई कुंजियाँ बतायीं।

सत्संग कार्यक्रम के दौरान दिनांक : २५ फरवरी को सार्वजनिक निर्माण मंत्री श्री ललित किशोर चतुर्वेदी और कोटा संसदीय सीट पर काँग्रेस के प्रत्याशी श्री रामनारायण मीणा पूज्यश्री से आशीर्वाद लेने आये थे। इस दिन तन की तंदुरुस्ती एवं मन की प्रसन्नता के अनेकों उपाय बताते हुए पूज्यश्री ने कहा : **''घात या असमय संकट से पति की रक्षा के लिए महिलाओं को रोज शिवजी को एक लोटा अर्घ्य देना चाहिए। इसमें अकाल मृत्यु को टालने की शक्ति है।''**

❀

** यदि आपमें धन, सत्ता, सौंदर्य, परिवार से सुख लेने की लालसा है तो समझ लीजिए कि आपका दुर्भाग्य जारी है।*

** ब्रह्मज्ञानी के सामने हम जो शुभ संकल्प करते हैं वे देर-सबेर फलते ही हैं।*

मधुर कीर्तन के आनंद में सराबोर जनसमुह : मोयद (गुज.)

विसनगर (गुज.) में वानप्रस्थाश्रम का भूमिपूजन करते हुए जीवन्मुक्त संत श्री आसारामजी बापू ।

विसनगर (गुज.) में कीर्तन व सत्संग की मस्ती में मस्त साधकवृंद ।